असली-नकली धर्म

ओशो के श्रीचरणों
में समर्पित
–स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती

श्री रजनीश ध्यान मंदिर
कुमाशपुर–दीपालपुर रोड
जिलाः सोनीपत, हरियाणा 131021

Rajneeshfragrance

+91 7988229565
+91 7988969660
+91 7015800931

एक झलक

इस व्यंग्य कविता के माध्यम से समझिए कि असली धर्म क्यों गायब हो जाता और नकली का बोलबाला होता है; क्योंकि-

असली चीज से नकली अधिक चलती है!

रोती है बुद्धिमानी, चालाकी हंसती है
मुस्कुराती बेईमानी, ईमानदारी फंसती है
दीप सभी चुक जाते, अंधियारी नहीं मिटती है
सच का खरीददार नहीं, झूठ खूब बिकती है।
जिंदगी का अंत है पर, मौत नहीं मरती है।
पैर थक जाएं मगर, बैसाखी नहीं थकती है।
क्योंकि असली चीज से नकली अधिक चलती है!

प्यारे,
सिर पीट रहे हैं असमान के तारे
आजकल उन्हें कोई पूछता नहीं
चमक रहे हैं फिल्मी सितारे!
हजारों किस्मत के मारे तारों को
फिल्म-स्टारों की चमक खलती है।
वास्तविक चंद्रमा की ओर लोग देखते ही नहीं
और चांद-सी सूरत देखने को तबियत मचलती है।
क्योंकि असली चीज से नकली अधिक चलती है!

अब परिश्रमी विद्यार्थियों की सुनिए कथा
दशा उनकी देखकर होती है व्यथा।
रात-रात आंखें फोड़ी सारी गर्मी के सीजन
दस-दस दफे किया, पूरे कोर्स का रिवीजन
फिर भी न हुए पास, टूट गई आश
जो मस्ती मारे साल भर, वे ही मार ले गए फर्स्ट-डिवीजन
समझे प्रियजन!
विद्या के अध्ययन से नकल अधिक फलती है।
क्योंकि असली चीज से नकली अधिक चलती है!

जैसा कि बता चुके
चांद से ज्यादा चंद्रमुखियों की कद्र होती है।
राजसिंहासन बना झूठ का आसन, सच्चाई कब्र में सोती है
कच्चे मोती तो सुंदरियों के वक्षों पर शोभित हों
और वैद्यराज के खल में बेचारा पिसता पक्का मोती है
भ्रष्टाचारी-पड़ोसिन के गहनों को देख-देख
ईमानदार हरिशचंद्र की पत्नी भी रोती है
कहती है 'सुनो जी, हमें खाने को तेल नसीब नहीं
और ये अपने कुत्ते के बालों में शुद्ध घी मलती है।'
हाय रे हाय! असली चीज से नकली अधिक चलती है!

गांव की महासुन्दरी भी शहर में नहीं फबती है
और शहर की प्रौढ़ा भी बच्ची सी लगती है।
पावडर का लेप, माडर्न वेश, चमचमाता फेस,
ओठों पे लिपिस्टिक की लाली, आंखों में काजल की काली
केशों के नकली विग से जवानी नहीं ढलती है।
झड़ जाते असली बाल, विग नहीं झड़ती है
बरखुरदार, असली चीज से नकली अधिक चलती है!

आगे सुनिए व्यापारियों के हाल
शुद्धतावादी दुकानदार, हो गए हैं फटेहाल
खूब फल-फूल रहे हैं अशुद्धिकरण के धंधे
शासन, प्रशासन, कानून, संविधान सब हो गए हैं अंधे।
आटे में नमक, सोडे में चूना, गरम मसाले मे कचरा भूना
दाम लिया दूना तो कूड़ामल सिंधी का
व्यवसाय बढ़ा दिन-दूना रात-चौगुना।
जीरों में लकड़ी का बुरादा, उच्च विचार जीवन सादा।
मिर्च में घिसी ईंटा शक्कर में पानी सींचा, खूब पैंसा खींचा।
मिस्टर प्योर सिंह जब कहते हैं, तो उनकी आंखों से आंसू बहते हैं।
कि बेकार गए जिंदगी के पचास साल
हम बेवकूफ बेचते रहे असली माल।
सुनो भैय्या, प्योर तंबाकू, प्योर गुड़, प्योर लैय्या
हाय, ले डूबी मेरी नैय्या।
ओरीजिनल है मंहगी, डुप्लीकेट है सस्ती
महंगी कौन लेगा, पागल है क्या बस्ती?
मंहगी से जनाब, सस्ती अधिक खपती है।
हुजूर, असली चीज से नकली अधिक चलती है!

होशियार लोग समझते हैं
कि नकली में असली से ताकत होती ज्यादा
तभी तो डालडा खाने वाला फूलता जाता।
जीवित राम जंगल जाते, रामलीला का राम पूजा जाता।
ईसा का गला सूली पर लटकता, ईसाई गले में सूली लटकाता।
आत्मकथा होती सच्ची, व्यंग्य कथा झूठी
इसलिए आटोबायोग्राफी से ज्यादा व्यंग्य पढ़ा जाता।
बेचारे पहलवान रियाज करते रह जाते
नकली मूंछों वाले बन जाते दादा
नेताजी को वोटें कैसे मिली? राज है उसका झूठा वादा।

गाने को लोग भूल जाते, पर पैरोडी चलती है।
झूठों के आगे सच्चे की दाल नहीं गलती है।
क्योंकि साहेबान, असली चीज से नकली अधिक चलती है!

जरा डॉक्टरी सलाह पर भी गौर फरमाइए
बच्चों को असली दूध मत पिलाइए।
'गर लिखा होगा उनके भाग्य में
तो अमूल, लेक्टोजन या बोर्नबिटा मिल जाएगा बाजार में
उसी को घर लेते आइए।
डिब्बों के मिल्क-पाउडर से बच्चों की हैल्थ बनती है
टिन्ड-फुड की आदत बचपने में डलती है।
सिर्फ नासमझों के घर आजकल गाय पलती है।
सुनिये साहब, असली चीज से नकली अधिक चलती है!
असली फूल से बेहतर कागज के फूल जीते हैं।
शराब से ज्यादा लोग काकटेल पीते हैं।
क्योकि अर्धनारीश्वर को पूजने वाले हम भारतवासी हैं।
समन्यवादी हैं, आदिकाल से ही मिलालट के आदी हैं।
मेलजोल से रहो- कह गए हमारे दादा-दादी हैं।
अत: 'अपनी' से ज्यादा 'पराई' हमें जंचती है।
पतिव्रता से ज्यादा मिली-जुली भली लगती है।
अजी दूध में कहां वो मजा, हमें तो चाय अच्छी लगती है।
समझो मित्रों, असली चीज से नकली अधिक चलती है!

रोती है बुद्धिमानी, चालाकी हंसती है
मुस्कुराती बेईमानी, ईमानदारी फंसती है
दीप सभी चुक जाते, अंधियारी नहीं मिटती है
सच का खरीददार नहीं, झूठ खूब बिकती है।
जिंदगी का अंत है पर, मौत नहीं मरती है।
पैर थक जाएं मगर, बैसाखी नहीं थकती है।
क्योंकि असली चीज से नकली अधिक चलती है!

किस्मत के मारे चांद को, चांद सी सूरत खलती है।
विद्या के अध्ययन से, नकल अधिक फलती है।
गिरते हैं असली बाल, विग नहीं झड़ती है।
मंहगी से जनाब, सस्ती अधिक खपती है।
झूठों के आगे सच्चे की दाल नहीं गलती है।
मान गए न बंधु–
असली चीज से नकली अधिक चलती है!

बस यही दुखद कथा है दुनिया के सारे धर्मों की–
पंडित–पादरी–मौलवियों के झूठे–स्वार्थी धंधों की।
स्वर्ग के नाम लोभ दे रहे, नर्क के नाम डरा रहे हैं;
भगवान का पता, कहीं दूर आसमान में बता रहे हैं।
ईमान–प्रेम की चर्चा कर, इंसानों को लड़ा रहे हैं।
मंदिरों में श्रद्धा नहीं, अंधविश्वास पनपती है।
असली चीज से नकली अधिक चलती है!

–स्वामी शैलेन्द्र सरस्वती

अनुक्रम

पहला प्रवचन

ओशो की वैज्ञानिक दृष्टि में अध्यात्म क्या है?

मुख्य बिन्दु :

- पूर्वाग्रहों से मुक्त हो सकती है सत्य की खोज
- आत्मा का विकास- सेल्फ डेवलपमेंट

मेरे प्रिय आत्मन्,

आपकी तथाकथित धर्मनगरी जम्मू में पहली बार आया हूं। यूं तो परिचितों के बीच भी हम अजनबी ही रहते हैं। लेकिन परिचय से भ्रांति पैदा हो जाती है कि हम एक-दूसरे को जानते हैं। वस्तुत: जो स्वयं को ही नहीं जानता, वह भला अन्य को कैसे पहचान सकेगा? बहुत आह्लादित महसूस कर रहा हूं कि अपने हृदय की थोड़ी सी बातें आपके संग शेयर करने का अवसर मिला है। सद्गुरु ओशो से प्राप्त दृष्टिकोण से जीवन जीने पर मुझे अद्भुत शांति की उपलब्धि हुई है। मेरा भाव है कि वह अनूठी दृष्टि आपके सम्मुख उजागर कर सकूं। मेरी कोई भी बात मानने की जरूरत नहीं है। विश्वास करना आवश्यक नहीं, वह विवेक की उत्पत्ति

में बाधक ही है। हां, सहानुभूतिपूर्वक मुझे सुनें; फिर सोचें-विचारें, चिंतन-मनन करें। जो बात ठीक प्रतीत हो, उस पर प्रयोग आरंभ करें।

सोच-विचारकर किए गए प्रयोग के परिणाम आने पर ही प्रमाणित होता है कि वह विचारधारा सही है अथवा गलत? जो विज्ञान की अन्वेषण पद्धति है, वही धर्म की भी है। अंतर केवल इतना है कि वैज्ञानिक पदार्थ-जगत की खोज करता है, धार्मिक व्यक्ति चेतना के सत्य को खोजता है। अंतरात्मा ही अध्यात्म की प्रयोगशाला है। वास्तव में अध्यात्म अंतस-विज्ञान है। परंतु दुर्भाग्यवश धर्मों के नाम पर जो अंधविश्वासपूर्ण क्रियाकांड एवं निरर्थक दार्शनिक सिद्धांत प्रचलित हैं, उनकी वजह से बुद्धिमान आदमी धर्म के नाम से ही चिढ़ने लगा है।

एक छोटी सी कहानी से मैं अपनी बात शुरू करूंगा। किसी गांव में एक साधु का आगमन हुआ। गांव के लोगों ने उससे निवेदन किया कि आज रविवार है, छुट्टी का दिन है। आप कृपया मंदिर में आएं और धर्म के बारे में, परमात्मा के बारे में हमें कुछ समझाएं।

उस साधु ने कहा- क्यों मुझे तंग करते हो? तुम्हें ईश्वर से, परमात्मा से क्या लेना-देना? जाओ अपना काम-धंधा करो। लेकिन वे कहने लगे आज रविवार का दिन है, छुट्टी का दिन है। साधु ने कहा- ठीक, अब मैं समझा कि तुम लोग किसलिए मेरे पीछे पड़े हो। तुम्हारे पास कुछ करने को नहीं है। कुछ मनोरंजन हो जाएगा, शायद इसलिए मुझे बुलाना चाहते हो। धर्म में तुम्हारी रुचि हो ऐसा तो तुम्हें देखकर लगता नहीं।

उनके बहुत जिद करने पर वह साधु मंदिर गया। जाकर उसने सवाल पूछा- इसके पहले कि मैं कुछ बोलना शुरू करूं, मैं जानना चाहता हूं कि आप लोग ईश्वर के बारे में कुछ जानते हैं या नहीं जानते हैं? सभी लोगों ने हाथ उठाए और कहा कि हां, निश्चितरूप से ईश्वर है ऐसा हम मानते हैं। हम आस्तिक लोग हैं तभी तो मंदिर आए हैं। साधु हंसने लगा और बोला कि ठीक, जब तुम्हें पता ही है ईश्वर के बारे में, तो मैं तुम्हें और क्या समझाऊं। जिसने परम सत्य को जान लिया, उसे क्या जानने को शेष बचा? जाओ, अपने घर जाकर आराम करो, मैं भी आराम करूं। साधु मंच से नीचे उतर वापिस अपनी झोपड़ी में चला गया। गांव के लोग

बड़े हैरान हुए, इस अजीब आदमी ने तो कुछ प्रवचन दिया ही नहीं। बोलने का मौका मिल जाए तो लोग माइक नहीं छोड़ते! यह आदमी विशिष्ट है, अवश्य कुछ गहरे राज की बात जानता है।

दूसरे शनिवार की शाम वे फिर पहुंच गए और उन्होंने कहा कि महाराज, आप कल हमारे मंदिर में आएं और अध्यात्म के बारे में हमें कुछ समझाएं। उसने कहा मैं पिछली बार गया था। तुम सब ज्ञानी हो, तुम्हें क्या समझाना! वे कहने लगे- नहीं, हम वे लोग नहीं हैं। धार्मिक आदमी और बेईमान न हो, झूठ न बोलता हो, यह करीब-करीब असंभव बात है। पाखंडी होना धार्मिक होने का पर्यायवाची हो गया है। उस साधु ने कहा- तुम्हारी शक्ल-सूरत भलीभांति याद है मुझे। लेकिन वे कहने लगे, हम दूसरे लोग हैं, आप आइए तो सही।

वे न माने तो साधु पहुंचा, उसने फिर वही सवाल उठाया। क्या आप लोग धर्म में आस्था रखते हैं, ईश्वर में विश्वास करते हैं? उन सबने पहले ही तय कर रखा था, कहा कि नहीं, हमें धर्म वगैरह में भरोसा नहीं है, हम लोग नास्तिक हैं। कहीं कोई भगवान इत्यादि नहीं है। सब झूठी बकवास है। आप बताइए हमें धर्म के बारे में, ईश्वर के बारे में। साधु हंसने लगा। उसने कहा- हद हो गई, जो है ही नहीं उसके बारे में मैं क्या बताऊं? जब तुम्हें पक्का पता है कि ईश्वर है ही नहीं, तो मुझे किसलिए बुलाया?

गांव के लोग बड़े परेशान हुए। बगैर प्रवचन दिए आज फिर साधु लौट गया। तीसरे शनिवार की शाम लोग फिर उसकी झोंपड़ी पर पहुंचे। उन्होंने कहा कि हम नए लोग हैं, आप कल मंदिर में भाषण देने जरूर आइए। उस साधु ने कहा गजब करते हो, तुम वही के वही लोग हो! छोटा सा गांव है, मैं तुम्हारी सूरत भलीभांति पहचानने लगा हूं। मगर धार्मिक इंसान हठी प्रवृत्ति के होते हैं। उन हठयोगियों के बहुत जिद करने पर वह फिर रविवार को गया। उसने फिर वही पुराना सवाल दोहराया। इस बार गांव के लोग कुछ और रेडीमेड उत्तर तय करके आए थे। साधु ने जब पूछा- धर्म और परमात्मा के बारे में आपकी क्या दृष्टि है? तब आधे लोग हाथ उठाकर बोले कि हम मानते हैं कि ईश्वर होता

है, आधे लोगों ने कहा कि बिल्कुल नहीं, हम नहीं मानते कि ईश्वर होता है। अब आप बोलिए दोनों में कौन सही है? साधु ने कहा- चलो अच्छा हुआ, मेरी झंझट खत्म हुई। मुझे बोलने की कोई जरूरत नहीं। क्योंकि जो लोग जानते हैं ईश्वर को, वे उन लोगों को बता दें जो ईश्वर को नहीं जानते। मैं जाकर अपनी झोपड़ी में आराम करूं। धन्यवाद कहकर वह विदा हो गया। भीड़ हतप्रभ रह गई, उनकी चालाकी काम न आई। बड़ी मुश्किल हो गई।

साधु तीन महीने उस गांव में रहा, मगर गांव के लोग दोबारा निवेदन करने उसके पास नहीं आए। तीन महीने बाद जब वह गांव छोड़कर जा रहा था, लोग उसे विदा करने आए। उन्होंने बताया कि हम लोगों को तीन ही उत्तर सूझे। एक तो हां, दूसरा न और तीसरा दोनों इकट्‌ठे, आधे-आधे। वही हमने किया, लेकिन आपने तीनों ही स्थितियों में कोई प्रवचन न दिया। साधु ने कहा मैं इंतजार कर रहा था कि तुम लोग चौथी बार फिर आओगे। उन लोगों ने कहा- हम किस मुंह से चौथी बार आते, और कौन-सा उत्तर हो सकता था? या तो हां, या न, या दोनों; इसके अलावा और क्या हो सकता था? साधु ने कहा, अब जाते-जाते तुम्हें बता ही दूं। अगर मैं पूछता कि ईश्वर है और तुम चुप रह जाते, मैं पूछता कि धर्म में आस्था है तुम्हारी और तुम कंधे बिचकाते कि हमें कुछ मालूम नहीं है; न हमारी आस्था है, न अनास्था है, न हम आस्तिक हैं, न हम नास्तिक हैं, हम जिज्ञासु हैं, हम वैज्ञानिक दृष्टिकोण से खोजने में उत्सुक हैं, सत्य का पता लगाना चाहते हैं; तब मैं अवश्य बोलता।

प्यारे मित्रो, जो उस साधु ने किया था मैं आप लोगों के साथ नहीं करूंगा। मैं इतना कठोर नहीं हूं कि एक सवाल आपसे पूछ के चला जाऊं। लेकिन मैं आपसे इतना जरूर निवेदन करना चाहूंगा, अपने भीतर आप टटोलें। क्या आप पहले से ही कुछ मानते हैं, तो फिर आप वैज्ञानिक दृष्टि वाले नहीं हैं। एक वैज्ञानिक को अपने अज्ञान का स्वीकार होता है, उसकी अपनी पहले से कुछ बंधी-बंधाई धारणा नहीं होती। वह खोज में उत्सुक होता है कि मैं जानूंगा, मैं पहचानूंगा जो भी सत्य होगा उसका पता लगाऊंगा, लेकिन अपना कोई पूर्वाग्रह, अपने से

पहले से ही उसकी कोई पक्की मान्यता नहीं होती। वह सारी मान्यताएं गिरा देने को तैयार होता है।

तो आज का जो विषय है अध्यात्म के संबंध में- ओशो की वैज्ञानिक दृष्टि। तो पहले तो इन दो शब्दों को समझ लें। अध्यात्म क्या है? अध्यात्म का अर्थ है- आत्मा का विकास, सेल्फ डेवलपमेंट। हमारे भीतर जागरूकता का विकास, चैतन्यता का विकास। हम और-और विकसित हों, ग्रोथ ऑफ कांससनेस, यह अध्यात्म का अर्थ है। इसका हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिक्ख, जैन से कुछ लेना-देना नहीं। वे सब संप्रदायों के नाम हैं, वे मान्यताओं के नाम हैं, उनके अपने-अपने पूर्वाग्रह हैं, उनके अपने पक्के सिद्धांत हैं, वे कट्टरपंथी लोग हैं, उनके पास वैज्ञानिक दृष्टि नहीं है। और अध्यात्म का अर्थ है- वह बात जो हमारी आत्मा को विकसित करे। और वैज्ञानिक दृष्टि का अर्थ है कि हम पक्षपात रहित हैं, हमारा कोई पक्षपात नहीं है, हम खोजने में उत्सुक हैं। एक वैज्ञानिक अगर पहले से ही कुछ मान बैठे कि ऐसा-ऐसा सच है, तब तो फिर वह खोज न पाएगा। मैंने सुना है, एक अद्‌भुत आदमी मुल्ला नसरुद्दीन के बारे में। बंबई महानगरी में रहता था। शाम को अपने घर के सामने कुछ पानी छिड़क रहा था और मंत्र गुनगुना रहा था। एक अजनबी आदमी जो वहां से गुजर रहा था, उसने पूछा कि आप यह क्या कर रहे हैं? कौन सा मंत्र पढ़ रहे हैं? नसरुद्दीन ने कहा कि यह मंत्र इसलिए पढ़ रहा हूं ताकि जंगली जानवर शेर, चीते, हाथी इत्यादि यहां शहर में न आएं। वह आदमी थोड़ा हैरान हुआ। उसने कहा कि क्षमा करें, मैं पिछले 25 सालों से बंबई में रहता हूं, आज तक मैंने कभी सुना नहीं कि कोई शेर, चीता, हाथी यहां आया हो। आदमी को चलने की जगह नहीं है बंबई में, हाथी आना भी चाहे तो नहीं आ सकता। नसरुद्दीन ने कहा कि तुम बिल्कुल ठीक कहते हो। तुम पिछले 25 सालों से जानते हो न कि यहां कोई जंगली जानवर नहीं आया। क्योंकि मैं पिछले 40 सालों से रोज यह मंत्र पढ़ता हूं। आ ही नहीं सकता। यहां फटक नहीं सकता। तुम खुद प्रमाणित कर रहे हो कि मेरा मंत्र सही है। जो आदमी पहले से ही कुछ मान कर बैठा है उसे उसके पक्ष में प्रमाण भी मिल जाएंगे। लेकिन नसरुद्दीन को हम वैज्ञानिक नहीं कह सकते, यह अंधविश्वासी है। और मजे की बात है, जिंदगी में हर चीज

के प्रमाण मिल जाएंगे अगर तुम खोजने गए। अगर तुम्हें पहले से ही कुछ विश्वास है, कुछ विलीव, कोई धारणा है, तो तुम्हें उस धारणा के पक्ष में बहुत से तर्क मिल जाएंगे, बहुत से सबूत मिल जाएंगे। लेकिन यह अवैज्ञानिक दृष्टि है। तो वैज्ञानिक दृष्टि का मतलब है कि मैं अपनी कोई भी दृष्टि न रखूंगा। दृष्टिरहित, पक्षपातरहित। मैं खोज करूंगा। लेकिन मैं अक्सर जाता हूं धार्मिक सभाओं में, जो लोग आते हैं वे मुझे खोजी प्रवृत्ति के नहीं लगते। वे सस्ती मान्यताएं पकड़ने को आए होते हैं। अधिकांश लोग तो मनोरंजन करने को आए होते हैं। कुछ काम नहीं, फुर्सत में बैठे हैं, टी.वी. सीरियल से बोर हो गए हैं तो उन्होंने सोचा कि चलो किसी साधु-महात्मा के प्रवचन ही सुन लें। टी.वी. चैनल बदल रहे हैं, धार्मिक चैनल भी लगा के दो मिनट देख लिया क्या आ रहा है। उनके मन में कोई खोज नहीं है, कोई जिज्ञासा नहीं है। और न ही उनके पास विचार करने की कोई क्षमता है, आतुरता है। अधिकांश लोगों के बारे में कह रहा हूं। कोई पैदाइशी हिन्दू है। उसने कभी पैदा होने के पश्चात विचारपूर्वक, विवेकपूर्वक निर्णय नहीं लिया है कि मुझे हिन्दू होना है। संयोग की बात कि जिस परिवार में जन्मा वह हिन्दू परिवार था, वह भी हिन्दू हो गया। वह भी गणेश जी की पूजा करने लगा, शंकर जी के आगे मत्था टेकने लगा। संयोग की बात कि सिक्ख परिवार में पैदा हो गया, गुरुद्वारे में जाकर मत्था टेकने लगा। संयोग की बात ईसाई परिवार में पैदा हो गया, चर्च जाने लगा। यह धर्म उसका स्वयं का चुनाव नहीं है। यह किसी सोच-विचार के द्वारा वह इस निष्पत्ति पर नहीं पहुंचा है कि यह धर्म का मार्ग, यह साधना का मार्ग ठीक है। उसे कोई साधना-वाधना करनी भी नहीं है। सिर्फ समाज में एक मुखौटा ओढ़ के जीना है कि मैं भी एक धार्मिक आदमी हूं। इससे अहंकार को तृप्ति मिलती है।

तो वैज्ञानिक दृष्टि का मतलब हुआ कि मैं अपनी ही मान्यताओं पर प्रश्न चिन्ह लगाने को राजी हूं।

प्यारे मित्रों, आप यहां उपस्थित हुए हैं दो घण्टे का समय निकालकर, अपने भीतर टटोलें। क्या आप स्वयं के ऊपर एक संदेह, अपने ऊपर एक प्रश्न चिन्ह लगाने को राजी हैं? क्या कोई बात आपको गलत समझ में आएगी तो आप उसको छोड़ने को राजी हैं?

क्या कोई बात आपको सही लगेगी तो उसके साथ आप खड़े होने को राजी हैं या आपके पूर्वाग्रह बीच में आ जाएंगे? यदि आपका कोई भी पूर्वाग्रह नहीं है तो फिर आप वैज्ञानिक दृष्टि के नहीं हैं। लोग भजन-कीर्तन करने, मनोरंजन करने, धर्म सभाओं में चले जाते हैं, समय बिताने के लिए। ट्रेन में मूंगफली बेचने वाले कहते हैं कि टाईम पास मूंगफली। कुछ करने को नहीं है, बैठे-बैठे मूंगफली तोड़ो, मूंगफली खाओ समय पास हो जाएगा। इसी प्रकार कुछ लोग राम-राम का जाप कर रहे हैं, कोई कुछ मंत्र बुदबुदा रहा है, कोई गायत्री मंत्र पढ़ रहा है, कोई कुछ कर रहा है। वह सब टाईम पास मूंगफली से ज्यादा नहीं है। उसकी कोई कीमत उनके मन में नहीं है। न वे किसी विचार-विमर्श से किसी नतीजे पर आए हैं। तो अपनी मान्यताएं छोड़ने का साहस जिसके अंदर है केवल वही वैज्ञानिक दृष्टि को उपलब्ध होता है। नए के प्रति एक खुला हृदय हो, ओपन हार्ट। जो भी ठीक होगा मैं उसके साथ राजी हूं। मैं सत्य को मजबूर नहीं करूंगा कि वह मेरे साथ खड़ा हो, बल्कि मैं सत्य के पीछे जाने को राजी हूं। इतना साहस जिसके भीतर हो वह आदमी वैज्ञानिक दृष्टि वाला हो पाता है। सत्य को स्वीकारने का साहस। तेरे-मेरे के सिद्धांत के मोह में जो न पड़े। जो यह न कहे कि मैं हिन्दू हूं, मैं कैसे हिन्दू मान्यता को छोड़ूं। यह तो बड़ा अपराध हो जाएगा, पाप हो जाएगा। अगर मुझे समझ में आता है कि मेरी धारणाओं में कुछ भूलचूक है, कुछ अवैज्ञानिकता है मैं उसे छोड़ने को राजी हो जाऊं।

वेदों में लिखा है कि पृथ्वी अचला है। अचला अर्थात जो कभी नहीं चलती, नान मूविंग। अब हमें पता है कि पृथ्वी निरंतर चल रही है, एक क्षण को भी कभी ठहरती नहीं। पृथ्वी को अचला कहने का क्या मतलब? वेदों में लिखा है कि शेषनाग के फन पर पृथ्वी टिकी है। अब हम भलीभांति जानते हैं कि कहीं कोई शेषनाग नहीं है जिस पर पृथ्वी टिकी है। लेकिन क्या हम इस वेद को छोड़ पाएंगे, जरा अपने भीतर गौर करना। अधिकांश बातें गलत सिद्ध हो चुकी हैं जो उसमें लिखी थीं, लेकिन फिर भी हमारी जिद्द, कहीं हम मानना चाहते हैं कि वेद में जो

लिखा है वह सब सही है। यह जिद्द अवैज्ञानिकता है। जो व्यक्ति वैज्ञानिक चित्त का है वह चुनेगा। जो बात ठीक है सो ठीक है, वह कहीं भी लिखी हो। चाहे वेद में हो, चाहे कुरान में हो, चाहे बाईबिल में हो, मैं उससे राजी हूं अगर वह बात ठीक है। और अगर कोई बात गलत है तो गलत है। चाहे वह मेरे धर्मग्रंथ में लिखी हो, चाहे वह मेरे दुश्मन के धर्मग्रंथ में लिखी हो, अगर वह बात ठीक है तो ठीक है। मैं ठीक के साथ खड़े होने को राजी हूं, यह वैज्ञानिक दृष्टि का अर्थ हुआ।

मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन के बारे में एक और लतीफा। एक टेलर मास्टर के यहां उसने एक पैंट-सूट बनवाया उसने। वह टेलर मास्टर कुछ विचित्र था। जब नसरुद्दीन अपने कपड़े लेने पहुंचा, पैंट को पहना तो वह पैंट कोई तीन इंच ऊंचा था, एड़ी से। नसरुद्दीन ने कहा यह कैसा पैंट बनाया? दर्जी ने कहा अरे! पैंट बिल्कुल ठीक है, तुम जरा झुक के खड़े होओ। नसरुद्दीन थोड़ा झुक के खड़ा हुआ तो पैंट ठीक लगने लगा। और जब कोट पहना तो और मुसीबत खड़ी हो गई। एक हाथ उसमें जा ही नहीं रहा था, बहुत छोटा था। तो दर्जी ने कहा कि यह वाला कंधा नीचे झुका के रखो। फिर गर्दन भी तिरछी करनी पड़ी, कमर भी झुकानी पड़ी, एक घुटना मोड़ना पड़ा। बड़ी विचित्र हालत में नसरुद्दीन। दर्जी ने कहा कि जो हमने कपड़े सिए वे तो बिल्कुल ठीक हैं, तुम अपने शरीर को उसके साथ एक्जेस्ट करो। इस विचित्र हालत में नसरुद्दीन वहां से कपड़े पहन के बाहर निकला। बाहर निकलने पर किसी ने कहा कि अरे! लगता है कि नया सूट बनवाया है। नसरुद्दीन ने कहा कि हां, नया सूट बनवाया है। गर्दन तिरछी हो रही, हाथ तिरछा, एक घुटना तिरछा, कमर झुकी हुई। उस आदमी ने पूछा कि लगता है कि उस फलां-फलां दर्जी के यहां से बनवाया? उस टेलर मास्टर के यहां से। नसरुद्दीन ने कहा हां, उसी के यहां से बनवाया। लेकिन तुम कैसे पहचाने? उस अजनबी ने कहा वह टेलर मास्टर इतना अद्‌भुत है कि तभी उसने तुम्हारे जैसे आड़े-तिरछे आदमी के लिए इतना अच्छा सूट सिल दिया देखो।

तो प्यारे मित्रों, हमारे तथाकथित धार्मिक शिक्षक, साधु-महात्मा

उनके पास सब रेडीमेड फार्मूला है, पहले से सिले-सिलाए कपड़े हैं। और उसमें वे ठोक-ठोक के हमें फिट करने की कोशिश करते हैं और उससे बड़ी विकृति उत्पन्न हो गई है।

एक बार तय करना, क्या इस विकृति के बाहर आना चाहते हो?

पिछले हजारों-हजारों साल से धर्म के नाम पर, अध्यात्म के नाम पर जो चल रहा है, जिन सिद्धांतों को हम ढो रहे हैं, हमने अपनी चेतना उन सिद्धांतों के अनुसार ढाल ली। मैं आपसे कहना चाहता हूं कि कपड़े हमारे लिए हैं, हम कपड़ों के लिए नहीं हैं। और अगर कपड़ों में कहीं खराबी है तो हम कपड़ा बदलने के लिए तैयार हो जाएं।

आप देखते हैं विज्ञान में रोज क्रांति हो रही है। पिछले वैज्ञानिकों ने जो खोजा था, आज के वैज्ञानिक उसमें बहुत हेर-फेर कर देते हैं, बहुत परिवर्तन कर देते हैं। तो पिछली सदी में जो खोजा गया था, इस सदी में अधिकांश वे बातें गलत सिद्ध हो जाएंगी। कुछ और नए सिद्धांत आ जाएंगे और नए सिद्धांत पर भी जिद्द नहीं होगी कि यही सही है। कल को वे वैज्ञानिक फिर बदलने को राजी होंगे। मानते थे कि प्रकाश की किरण सीधी चलती है, बिल्कुल स्ट्रेट लाईन में। अभी कुछ सालों पहले पता चला कि नहीं, प्रकाश की किरण भी मुड़ जाती है बड़े तारों के पास, नए तथ्यों का पता चलेगा, विज्ञान उसके साथ बदलता चला जाता है।

धर्म पिछले दस हजार साल में नहीं बदला। यह अवैज्ञानिक चित्त का लक्षण है। धर्म को भी निरंतर परिवर्तनशील होना चाहिए। हर साल शास्त्रों के नए संस्करण छपने चाहिए, नए एडीशन। मेडिकल कालेज की टेक्स्टबुक या इंजीनियरिंग कालेज की टेक्स्टबुक हर साल-दो साल में नई छप जाती है। अगर सौ साल पुरानी मेडिकल टेक्स्टबुक देखें तो हास्यास्पद, चुटकुले जैसी लगती है। खूब हंसी आती है कि सौ साल पहले के डाक्टर क्या कर रहे थे यह पागलपन, यह कोई इलाज था। धीरे-धीरे विकास हुआ है, सौ साल में बहुत विकसित हो गए हैं हम, बहुत समझ बढ़ी है। क्योंकि पुराने के प्रति हमारा आग्रह नहीं। लेकिन धर्म के बारे में हमारा बिल्कुल विकास नहीं हुआ। क्योंकि हमारे मन में

पुराने की पकड़ है, उसे हम छोड़ना ही नहीं चाहते।

तो एक वैज्ञानिक चित्त का व्यक्ति सदा ही सत्य को पकड़ने को तैयार होगा, नए पुराने का फर्क वह न करेगा। कुछ बातें पुराने में भी सत्य थीं उसको हम बरकरार रखेंगे, कुछ बातें नए में सत्य हैं उसे स्वीकारेंगे। और कल को हमारा हृदय फिर खुला होगा, कल हमारी समझ और विकसित होगी, तब हम और सत्य को खोजेंगे, पता लगाएंगे और हम परिवर्तन करने के लिए सदा तैयार होंगे। हमारा कुछ फिक्स्ड पैटर्न और थिंकिंग, कोई सुनिश्चित ढांचा हमारा सोचने का नहीं होगा। ऐसा व्यक्ति वैज्ञानिक चित्त का व्यक्ति है।

दूसरा प्रवचन

अज्ञान केन्द्रित धर्म

मुख्य बिन्दु :

- वैज्ञानिक चित्त का उदय
- अज्ञानी धर्म का आधार - नकल, अनुकरण

ओशो के पास एक मनोविज्ञान के प्रोफेसर आए। उन्होंने ओशो से कहा कि आप मेरी कुछ मदद कीजिए। मैं एक रिसर्च कर रहा हूं, पुनर्जन्म के सिद्धांत को सत्य साबित करने के लिए। इससे मैं पी.एच.डी. कर रहा हूं। ओशो ने कहा- तुम पुनर्जन्म को मानते हो कि पुनर्जन्म होता है? उसने कहा कि हां, निश्चित रूप से होता है। इसके लिए वैज्ञानिक प्रमाण जुटा रहा हूं। ओशो ने कहा तुम वैज्ञानिक आदमी ही नहीं हो। जो आदमी पहले से ही मानता है कि पुनर्जन्म होता है, वह वैज्ञानिक कहां हुआ। हां, अगर तुम यह कहते कि मैं पता लगाना चाहता हूं पुनर्जन्म होता है कि नहीं, मैं पक्ष में, विपक्ष में दोनों प्रकार के प्रमाण खोजूंगा और अंत में जाकर निष्कर्ष लूंगा, तब एक वैज्ञानिक चित्त हुआ। यह प्रोफेसर तो पहले से ही मानता है कि पुनर्जन्म होता है, अब यह सिर्फ पक्ष-पक्ष के प्रमाण मांग रहा है, सबूत खोज रहा है। और निश्चित रूप से सबूत खोजोगे मिल जाएंगे। नसरुद्दीन को मंत्र पढ़ने का सबूत मिल गया न कि 25 साल से जंगली

जानवर नहीं आए, देखो सिद्ध मंत्र है बिल्कुल, मंत्र का प्रभाव देखो। यह आदमी वैज्ञानिक नहीं है, भले ही पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त कर ले और यह सिद्ध कर दे। क्योंकि निष्कर्ष तो यह पहले से ही जानता था, कनक्लूजन इसके हाथ में पहले से ही था। वैज्ञानिक चित्त वाला व्यक्ति मैं उसे कहता हूं जिसके पास कोई कनक्लूजन नहीं है, जो बिल्कुल अज्ञानी की भांति खड़ा है। वह कह रहा है कि मैं खोजूंगा और निष्कर्ष की जल्दी नहीं करूंगा। हमें उत्तर की बड़ी जल्दी पड़ती है, कोई फटाफट हमें उत्तर दे दे, रेडीमेट आंसर, हम अपने घर जाएं और आराम करें। नहीं, वैज्ञानिक व्यक्ति श्रम करने को राजी है, साधना करने को राजी है, हम करेंगे खोजबीन। यह पक्का नहीं है निष्कर्ष आ भी पाएगा कि नहीं आ पाएगा, हमारी जिंदगी बड़ी छोटी है। हो सकता है इस साठ-सत्तर साल में हम किसी निष्कर्ष में न पहुंच पाएं कि ईश्वर है कि नहीं। लेकिन हम खोजेंगे, निष्कर्ष की जल्दी न करेंगे। जिसके मन में अधैर्य है और जल्दी से उत्तर की खोज में है वह आदमी वैज्ञानिक चित्त का है ही नहीं। वह जल्दी से कुछ उत्तर पकड़ लेगा।

तो मैं आपसे निवेदन करना चाहता हूं कि यदि कोई उत्तर आपके पास पहले से हो तो उन्हें छोड़ दें और नया उत्तर पकड़ने की भी शीघ्रता न करें। मेरी कोई बात आपको मानने की जरूरत नहीं है, किसी की भी बात मानने की जरूरत नहीं है। सुनें, समझें, प्रयोग करें, अपनी विवेक, बुद्धि में जाचें, परखें, परीक्षण करें और धीरज रखें। जब तक कोई सॉलिड कनक्लूजन, कोई ठोस निष्कर्स आपके हाथ में अपने से, स्वयं के अनुभव से न आए किसी चीज को मत मानना।

आस्तिक भी अंधविश्वासी है और नास्तिक भी अंधविश्वासी है। एक का अंधविश्वास है कि ईश्वर है, एक का अंधविश्वास है कि ईश्वर नहीं है। ऐसा मत सोचना कि नास्तिक वैज्ञानिक दृष्टि का है। नहीं, क्या उसने पूरी दुनिया में, पूरे जहां में खोज लिया और तब पाया कि ईश्वर नहीं है? कोई खोज-वोज नहीं की है। जैसा वह आस्तिक ने घर बैठे-बैठे मान लिया कि ईश्वर है, क्योंकि उसके पिताजी कहते थे, क्योंकि किताबों में लिखा है, ऐसे ही उस नास्तिक ने, कम्युनिस्ट ने मान लिया है कि ईश्वर नहीं है, क्योंकि कालमार्क्स ने कहा है, दास कैपिटल

में लिखा है। इसकी अपनी, स्वयं की कोई खोज नहीं है। न आस्तिक वैज्ञानिक दृष्टि का है, न नास्तिक वैज्ञानिक दृष्टि का है।

तो मैं आपसे उम्मीद करता हूं, वह जो साधु ने कहा था, काश तुम खाली मन आए होते मेरे पास। तो मेरी विनती है आपसे खाली चित्त होकर बैठें। और मेरी बात को भी कोई उत्तर न समझें, मैं आपको कोई उत्तर देने नहीं आया हूं। बल्कि मैं आपके उत्तर छीनने आया हूं। ताकि आप स्वयं खोज सकें। वैज्ञानिक चित्त वाले व्यक्ति का लक्षण है अगर उससे सौ सवाल पूछो तो बामुश्किल एक का उत्तर देता है और वह भी पक्का नहीं कहता, सुनिश्चित नहीं कहता। कहता है कि अभी तक जो मैंने जाना उससे ऐसा मुझको प्रतीत होता है। और जिन्हें हम धार्मिक लोग कहते हैं, इनसे एक सवाल पूछो, वह सौ के उत्तर देने को तैयार हैं। वे पूरी सृष्टि और सृष्टा के बारे में बताने के लिए तैयार हैं कि भगवान ने कब दुनिया बनाई, कैसे बनाई, क्या-क्या किया, अपने बारे में पता नहीं कि हम कैसे बन गए और भगवान के बारे में उनको पता है कि भगवान ने कैसे दुनिया बनाई। तो इनको पक्का उत्तर मालूम है। ये लड़ने, मरने, मारने को तैयार हैं। धर्मयुद्ध और जेहाद करने को तैयार हैं। कोई इनके विपरीत सिद्धांत वाला मिल जाए तो उसकी गर्दन काटने को तैयार हैं। आप अपने भीतर देखना, क्या वैसा हठी और कट्टरपंथी चित्त आपका है, तब फिर आप वैज्ञानिक दृष्टि वाले व्यक्ति नहीं हैं।

तो मैं आपसे फिर विनती करता हूं कि धर्म की बात, अध्यात्म की बात मैं करूं उसके पहले आप अपने भीतर एक वैज्ञानिक चित्त का उदय करें। फिर अध्यात्म को समझना सरल होगा। इसके पहले कि अध्यात्म क्या है वैज्ञानिक चित्त से, इसके पहले हम समझें कि अध्यात्म का विकास कैसे हुआ मनुष्य जाति में। एक छोटी सी घटना हमें याद आती है। ए मेंटली रिटायर्ड, एक मानसिक रूप से अविकसित बच्चे को लेकर उसके माता-पिता एक वैज्ञानिक के पास पहुंचे। वह बच्चा एक बहुत बड़ा टेडीवियर अपने छाती से चिपकाए हुए था। उसकी उम्र कोई दस साल थी। अब कोई दो साल का, तीन साल का बच्चा खिलौने से खेले तो समझ में आता है, यह दस साल का बच्चा, मानसिक रूप से अविकसित। अभी भी दो साल के बच्चे जैसा व्यवहार कर रहा, एक टेडीबियर को छाती से

चिपकाए हुए है। गंदा, बदबूदार पुराना खिलौना हो चुका। उसके माता-पिता ने कहा कि इससे हम बहुत परेशान हैं, इसको यह छोड़ता ही नहीं। आप कुछ उपाय बताइए, मनोवैज्ञानिक की सलाह लेने आए थे। उस खिलौने से बदबू आ रही थी बहुत पुराना हो चुका था। उसके माता-पिता कहते थे कि उसको बदल दें, दूसरा ले आएं लेकिन वह उसको छोड़ने को तैयार ही नहीं था। जब मैं यह घटना पढ़ रहा था तब मुझे याद आया कि सारी मनुष्य जाति करीब-करीब ऐसी ही अविकसित मनोदशा में है जहां तक धर्म का संबंध है। पता नहीं कितने सड़े-गले, बासे खिलौने पकड़े हम बैठे हैं, उनसे सिवाय दुर्गंध के कुछ भी पैदा नहीं होता। हम जिन्हें धर्म कहते हैं पता नहीं उनके नाम पर कितना खून-खराबा हुआ है। हम जिन्हें ईश्वर का नाम कहते हैं उनके नाम पर कितने युद्ध हुए हैं। इतनी विकृतियां हुई हैं जिनका कोई हिसाब नहीं है। लेकिन फिर भी हम उसे पकड़े बैठे हैं छोड़ने को तैयार नहीं। इसको जरा समझना कैसे यह अध्यात्म, कैसे ये धर्म विकसित हुए। ताकि हम अपने जो रिटार्डेड रिलीजन्स हैं उसकी समझ जागृत कर सकें और तब हम वैज्ञानिक धर्म क्या है उसे समझ पाएंगे।

जैसे एक छोटे बच्चे का विकास होता है ऐसे ही मनुष्य जाति भी धीरे-धीरे कोई पिछले एक-डेढ़ लाख साल में धीरे-धीरे विकसित हुई है। शुरुआत में निश्चित रूप से अविकसित थी। और जो शुरुआत के धर्म थे वे अज्ञान पर आधारित थे। आप याद करें कि आज से एक लाख साल पहले हम लोग जंगलों में रहते थे, आदिवासी थे, जरा भी हमारे पास ज्ञान नहीं था, कोई विवेक-बुद्धि न थी। करीब-करीब पशुओं के समान थे। जीवन और प्रकृति में चारों तरफ हम देखते चीजों को आश्चर्य भाव से जैसे छोटा बच्चा देखता है। वह मनुष्य जाति का बचपना था। कोई भी चीज देख के एक जिज्ञासा उठती थी कि यह क्या है। छोटे बच्चे अक्सर सवाल पूछते न, यह क्या है? वो क्या है? ऐसा क्यों? वैसा क्यों? ठीक वैसे ही हमारे मन में सवाल उठते थे। बादल गरजता था तो सवाल उठता था कि यह बादल कैसे गरजे, यह पानी किसने गिराया, कि इंद्रधनुष कैसे निकल आया, ये सूरज कैसे उगता है, रात को तारे कहां से आ जाते हैं, दिन में कहां चले जाते हैं, यह धरती कहां टिकी है। हजारों सवाल पैदा होते हैं। तो निश्चित रूप से लाखों साल पहले जब मनुष्य जाति की शुरुआत हुई

ऐसे ही सवाल लोगों के मन में थे।

तो पहला जो धर्म का रूप जगत में आया वह अज्ञान पर केन्द्रित था, बेस्ड आन इग्नोरेंस। कुछ भी उत्तर जैसे हम बच्चों को समझाने के लिए दे देते हैं। किसी ने पूछा कि जो छोटे भाई का जन्म हुआ है वो कैसे हुआ? चार साल का बच्चा पूछ रहा है। अब उसे क्या बताएं? उसे कह देते हैं कि परियां इस छोटे बच्चे को दे गईं। वह पूछता है कि मैं कैसे आपको मिला माता-पिता से? वे कहते हैं हम बाजार गए थे, बाजार से तुमको खरीदे थे। बात खत्म हो गई, छोटे बच्चे के मन को बहला दिया। एक उत्तर उसे मिल गया सैटिसफाई हो गया। ठीक वैसे ही बादल गरजे हमें लगा कि कहीं बिजली न गिर जाए। सवाल उठा, बादल क्यों गरजते हैं, बिजली क्यों गिरती है, आदमी क्यों मर जाते हैं। कह दिया हमने कि इंद्रदेवता हैं तो वह जो धनुष जैसा दिखाई देता है न, वह इन्द्रधनुष है, वे अपना तीर खींच लेते हैं। और जहां कहीं कुछ गलत काम हो रहा है वहां बिजली गिरा देते हैं। और हम तृप्त हो गए। किसी भी तरह का बचकाना उत्तर और हम सैटिसफाई हो गए। पृथ्वी किस पर टिकी है? उन्होंने कहा शेषनाग पर टिकी है। बात खत्म हो गई, हमने मान लिया, सैटिसफैक्शन हो गया, वह जिज्ञासा, कौतूहल खत्म हो गया। पुराना जो धर्म था इसी प्रकार के बचकाने उत्तरों पर आधारित था, अज्ञान पर केन्द्रित था। कोई ज्ञान हमें था नहीं, कुछ समझ में आता नहीं था। कोई व्यक्ति कुछ भी उत्तर दे दे उसी से हम राजी हो जाते थे। वे धर्म नाममात्र के ही धर्म हैं, अधर्म से भी गए बीते हैं।

किसी ने पूछा कि एक आदमी अमीर है, एक आदमी गरीब है ऐसा क्यों हुआ?

अब बड़ा मुश्किल है, समाज की अर्थव्यवस्था की संरचना को समझना, बड़ा जटिल काम है, उसके लिए बड़ी वैज्ञानिक बुद्धि चाहिए। हमने सीधा-साधा सा उत्तर दे दिया कि सब ईश्वर की मर्जी से होता है। जिसके भाग्य में जैसा लिखा हो वैसा होता है। सैटिसफाई हो गया, वह गरीब भी तृप्त हो गया अपनी गरीबी से। अब वह विद्रोह भी नहीं करेगा, कोई बगावत भी नहीं करेगा। क्या कर सकते हो, भाग्य में यही लिखा था। बीमारी आयी, युवावस्था में किसी की मृत्यु हो गई, माता पिता दुखी हैं। पूछते फिर रहे पण्डितों से, पुरोहितों से कि मेरा बेटा क्यों

मर गया? उन्होंने कह दिया कि ईश्वर को जो प्यारे होते हैं, ईश्वर उन्हें जल्दी अपने पास बुला लेता है। बड़ी मीठी शक्कर लगाकर हमने एक कड़वी चीज को गुटकवा दिया। बेटे की मृत्यु सहन नहीं हो रही थी। लेकिन जब हमें पता चला कि अरे! मेरा बेटा तो ईश्वर को प्यारा हो गया, यानि भगवान उसे प्रेम करता था, उसे जल्दी अपने पास बुला लिया, चलो मुझे सांत्वना मिली, संतोष मिला।

तो अज्ञान पर आधारित धर्म सबसे पहले इस दुनिया में आए। मजे की बात है कि ये लोग बड़े जिद्दी और कट्टरपंथी होते हैं। ये जो बात मानते हैं उसमें बड़ी हठधार्मिकता दिखाते हैं। अलेक्झेंडर की सबसे बड़ी लाइब्रेरी थी आपने सुना हो, उतनी बड़ी लाइब्रेरी फिर कभी दुबारा नहीं बनी। और एक मुसलमान खलीफा एक हाथ में मशाल लिए और दूसरे हाथ में कुरान लिए पहुंचा अपनी सेना के साथ। आक्रमण किया उसने और उसने कहा कि इस लाइब्रेरी में जो किताबें हैं क्या उसमें वही लिखा है जो कुरान के अंदर है या इससे भिन्न कुछ है? बड़ा कठिन सवाल उसने पूछा। वह पहले से ही तय करके आया था कि आग लगा देंगे पूरी लाइब्रेरी में। इस सवाल का उत्तर अगर कहो कि हां, वही लिखा है जो कुरान में लिखा है तब उसने कहा कि फिर इसको रखने की जरूरत क्या है। ये अरबों-खरबों किताबें। जब इस कुरान में ही सब कुछ लिखा है, इतनी बड़ी लाइब्रेरी सम्हालने की क्या जरूरत। वह हाथ में मशाल लेकर आया है कि आग लगा दूंगा। और अगर तुम कहो कि कुरान से अतिरिक्त और कुछ लिखा है तब तो फिर वह बहुत ही नाराज होगा। जो कुछ परमात्मा को संदेश भेजना था वह पैगाम तो हजरत मोहम्मद पैगम्बर के हाथ आ चुका, वह इस किताब में है। इसके अतिरिक्त जो है वह सब गलत है, सब झूठ है। इसलिए भी इस लाइब्रेरी को आग लगा दूंगा। दोनों हालत में आग लगा दूंगा। और उसने आग लगा दी। वह लाइब्रेरी करीब तीन साल तक जलती रही। कितनी बड़ी लाइब्रेरी रही होगी जरा सोचो। मनुष्य जाति का संचित ज्ञान हजारों-हजारों साल का बरबाद कर दिया। ये जो अज्ञान को पकड़ने वाले लोग हैं, बड़े ही कट्टरपंथी दिमाग के होते हैं। ये जिद करते हैं कि जो हम कह रहे हैं वही सही, इसके अतिरिक्त जो कुछ कहा तो वह गलत। मैं जो मानता हूं बस वही सही है। यह बहुत ही बचकानी बुद्धि

है। यह जरा भी वैज्ञानिक चित्त का व्यक्ति नहीं है। लेकिन हम आदी हो गए हैं ऐसी चीजें सुनते-सुनते, हम कंडीशंड और संस्कारित हो गए हैं।

मैंने सुना है एक युवक एक ज्योतिषी के पास पहुंचा और उसने कहा कि मेरी अभी-अभी शादी हुई है, कृपया बताएं मेरा आगे कैसा जीवन कटेगा? ज्योतिषी ने कहा कि बीस साल तक तो तुम्हें बहुत दुख झेलने पड़ेंगे। उस आदमी ने कहा कि बीस साल के बाद तो मुझे सुख मिलेगा न ज्योतिषी जी? ज्योतिषी ने कहा नहीं, बीस साल बाद तो तुम आदी हो जाओगे उन दुखों के।

ठीक ऐसे ही हम धीरे-धीरे आदी हो गए हैं। बेवकूफी भरी बातें सुनते-सुनते कंडीशंड हो गए हैं। अब हमारे मन में कोई सवाल भी पैदा नहीं होता कि इसमें कुछ गलत है। कभी अज्ञान में हमने वे बातें मानी थी लाखों साल पहले हमारे पूर्वजों ने, आज भी हम उनको ढो रहे हैं। थोड़ा चौंको, थोड़ा जागो, ये सारी अवैज्ञानिक धारणाएं हैं, उनकी कोई भी कीमत नहीं। उनका वास्तविक अध्यात्म से कोई लेना-देना नहीं। वे हमारी हैबिट, हमारी आदत का हिस्सा हो गई हैं। इनसे मुक्त हो जाना पड़ेगा।

यह जो पुराना धर्म है अज्ञान पर आधारित, इसका सूत्र क्या है? इसका सूत्र है- नकल, अनुकरण। जो कहा जा रहा है वह मानो। आदर्शवाद। कोई आदर्श, कोई आइडियल हम बनाते हैं और कहते हैं, इसका अनुगमन करना होगा। इसके पीछे चलना होगा। इसपे श्रद्धा करो। ये श्रद्धा पर बड़ा जोर देते हैं। जहां भी कोई तुमसे कहे कि श्रद्धा रखो, विश्वास और भरोसा, फेथ, वहां जानना कोई बहुत ही अज्ञानपूर्ण बात है। कोई वैज्ञानिक व्यक्ति कभी नहीं कहेगा कि भरोसा करो। वह कहेगा प्रयोग करके देखो। अगर एक वैज्ञानिक कहता है कि 100 डिग्री पर उबालने पर पानी भाप बन जाता है, तो इसमें कोई श्रद्धा करने की जरूरत नहीं; तुम खुद उबाल के देख लो। अगर बन जाए तो ठीक, न बने तो बात गलत हो जाती है। इसमें मानने की क्या जरूरत।

तो जहां-जहां श्रद्धा और मान्यता है और जिद है, कि मेरी बात पर विश्वास करो, मेरा अनुकरण करो, मैं जो कह रहा हूं बस वही ठीक है, वहां जानना जरूर झूठ है। सत्य पर श्रद्धा करने की कोई जरूरत ही नहीं पड़ती। मैं आपसे पूछूं आपको सूरज पर भरोसा है कि नहीं तो आप हंसोगे, आप

कहोगे कि यह भी कोई सवाल है। सूरज पर भरोसे की क्या जरूरत, सूरज को हम जानते हैं सूरज है।

जिसे हम जानते हैं, उस पर श्रद्धा की और भरोसे की कोई जरूरत नहीं होती है। इसका यह मतलब हुआ कि जहां-जहां हमारी श्रद्धा, विश्वास और फेथ है वे सारी बातें झूठी हैं और उनको हम नहीं जानते। आप कहते हैं कि हमको पुनर्जन्म पर भरोसा है, इसका मतलब आपको पुनर्जन्म के बारे में कुछ नहीं मालूम। आप कहते हैं कि ईश्वर पर हमें भरोसा है, स्वर्ग और नर्क पर हमें भरोसा है, इसका अर्थ है- इसके बारे में आपको कुछ नहीं मालूम। आप कहते हैं भगवान ने दुनिया बनाई, आपको इसके बारे में कुछ नहीं मालूम। अगर मालूम होता तो विश्वास करने की जरूरत क्या थी, तब आप जानते ही।

वैज्ञानिक चित्त का व्यक्ति जानने पर जोर देगा, अवैज्ञानिक चित्त का व्यक्ति मानने पर जोर देगा। इस भेद को ख्याल रखना। तो पुराने सारे धर्म बड़े ही अविचार पर, अंधविश्वास पर आधारित हैं। वास्तविक धर्म चिंतन-मनन करेगा। आओ एक गीत सुनते हैं, फिर मैं आगे की चर्चा करूंगा। बड़ा प्रसिद्ध भजन है-

इतनी शक्ति हमें देना दाता, मन का विश्वास कमजोर हो न,
हम चलें नेक रस्ते पे हमसे, भूलकर भी कोई भूल हो न।
इतनी शक्ति हमें देना दाता, मन का विश्वास कमजोर हो न।
दूर अज्ञान के हों अंधेरे, तू हमें ज्ञान की रोशनी दे,
हर बुराई से बचते रहें हम, जितनी भी दे भली जिंदगी दे,
बैर हो न किसी का किसी से, भावना मन में बदले की हो न।
हम चलें नेक रस्ते पे हमसे, भूलकर भी कोई भूल हो न,
इतनी शक्ति हमें देना दाता, मन का विश्वास कमजोर हो न।
हर तरफ जुल्म है बेबसी है, सहमा-सहमा सा हर आदमी है,
पाप का बोझ बढ़ता ही जाए, जाने कैसे ये धरती थमी है,
बोझ ममता से तू ये उठा ले, तेरी रचना का ही अंश हो न।
हम चलें नेक रस्ते पे हमसे, भूलकर भी कोई भूल हो न,
इतनी शक्ति हमें दे न दाता, मन का विश्वास कमजोर हो न।

तीसरा प्रवचन

भय और लोभ केन्द्रित धर्म

मुख्य बिन्दु :

- पंडित, पुरोहित, समाज के ठेकेदारों द्वारा उत्पन्न भय
- संत कहते हैं- डरो नहीं, परमात्मा से प्रेम करो
- निडर को प्रलोभन देकर फंसाने का धार्मिक षड़यंत्र

मनुष्य अज्ञानी थे कभी, बड़े अशक्त थे, निर्बल थे, चारों तरफ विपदाएं थीं, प्राकृतिक प्रकोप थे, बीमारियां थीं, कुछ सूझता नहीं था। और इस प्रकार के धर्म, इस प्रकार की प्रार्थनाएं उत्पन्न हुई विश्वास वाली। हम भरोसा करना चाहते थे कि कहीं कोई ईश्वर हो। ऐसा नहीं कि हमने पता लगा लिया था कि है, पर वह छोटा बच्चा उस टेडीवियर को चिपकाए है। उसको जरूर किसी प्रकार की सांत्वना मिलती है, राहत मिलती है। एक सुरक्षा का एहसास उसको होता है।

दूर अज्ञान के हों अंधेरे, तू हमें ज्ञान की रोशनी दे।
हर बुराई से बचते रहें हम, जितनी भी दे भली जिंदगी दे।
हर तरफ जुल्म है, बेबसी है, सहमा-सहमा सा हर आदमी है।

यह हमारी स्थिति थी, और हम परेशान थे। एक दूसरे प्रकार का धर्म पैदा हुआ अज्ञान के बाद, वह है भय केन्द्रित धर्म।

समाज के ठेकेदार, धर्म के ठेकेदार कैसे लोगों को नियंत्रण में रखें, उन्होंने भय पैदा किया। नरक की बातें बतायीं कि अगर हमारी बात नहीं मानोगे, हमारी आज्ञा न सुनोगे तो नरक में बड़ी यातना दी जाएगी। अग्नि में जलाए जाओगे, भूने जाओगे, बड़े कष्ट मिलेंगे। ताकि लोग कंट्रोल में रह सकें, नियंत्रण में रह सकें। एक छोटा बच्चा भयभीत होता है और माता पिता, आप सब जानते हैं माता-पिता हैं, आप सब अपने बच्चों को कैसे कंट्रोल में रखते हैं। पोषी चीजों से आपको डराना पड़ता है, झूठी बातें कहनी पड़ती हैं। ठीक वही बात हमारे समाज के ठेकेदारों ने, साधु-महात्माओं ने, पण्डित-पुरोहितों ने नरक के नाम पर लोगों को डराया। शैतान के नाम पर, यमराज के नाम पर लोगों को डराया। यह मत करो।

मैंने सुना है- मुल्ला नसरुद्दीन का बेटा फजलू से उसका कोई नाम पूछ रहा था। कोई मेहमान घर में आया था, उसने पूछा कि तुम्हारा नाम क्या है? उसने कहा मेरा नाम फजलू डोन्ट। उस आदमी को थोड़ा अजीब सा लगा। उस आदमी ने कहा- यह कैसा नाम फजलू डोन्ट? उसने पूछा किस भाषा का है यह, न तो उर्दू का लगता, न तो हिन्दी का लगता, न अंग्रेजी का लगता। फजलू डोन्ट ने कहा- हां, यही मेरा नाम है। उसने नसरुद्दीन से पूछा कि तुमने अपने बेटे का यह कैसा विचित्र सा नाम रखा है? यह किस भाषा का है? उसने कहा इसका नाम फजलू है। मेहमान ने कहा कि यह तो बता रहा था कि फजलू डोन्ट। तब समझ में आया कि उस बच्चे ने बचपन से हमेशा यही सुना है कि फजलू डोन्ट डू दैट, फजलू डोन्ट डू दिस, फजलू यह मत करो, फजलू वह मत करो। जब भी फजलू शब्द आया उसके साथ डोन्ट आया ही आया था। तो वह समझ रहा था कि फजलू डोन्ट मेरा नाम है और बेचारा बड़ा आज्ञापालन करता था। उससे कहा फजलू डोन्ट ईट आइसक्रीम। तो फजलू डोन्ट जाते और आइसक्रीम खा लेते। फजलू डोन्ट गो आउट

साइड, तो फजलू डोन्ट तुरंत बाहर चले जाते। वह अपना नाम ही समझ रहा था फजलू डोन्ट।

एक दूसरे प्रकार के धर्म पैदा हुए, जो डोन्ट डू दिस पर आधारित थे। यहूदी धर्म में टेन कमाण्डमेंट हैं, दस आज्ञाएं। यह मत करो, यह मत करो, यह मत करो। अभी आप गीत सुन रहे थे न, बुराई से हम बचें। कैसे बचें? हम भले काम कैसे करें? भूलकर भी हमसे कोई भूल हो न। आदमी डर-डर के जीने लगा। और इन धार्मिक लोगों ने उसे बहुत डराया।

तो भय केन्द्रित धर्म का जन्म हुआ। तो यह भी बड़ा अवैज्ञानिक है, इसका भी कोई साइंटिफिक बेस नहीं है। बस मनोविज्ञान समझें। जैसे छोटे बच्चे को डराना पड़ता है, वैसे ही हमारे पूर्वज मनुष्य जाति की बचकानी इनमिच्योर अवस्था थी, उन्हें डरा-डरा के ही काबू में रखा जा सकता था। आज भी हमें डराना होता है। अब लोग नर्क से नहीं डरते तो उन्हें यहीं पर सजा देनी पड़ती है। न्यायालय, कोर्ट और जज, संविधान, कानून इसके नाम से डराना पड़ता है। लेकिन कुछ लोग हैं उससे भी नहीं डरते। उनको मरने के बाद भी भय पैदा करना पड़ेगा कि फिर अगर हमारी बात नहीं मानी, सद्चरित्र न हुए तो मरने के बाद फिर नर्क में यातना पाओगे। यहां हो सकता है कि तुम बड़ा वकील कर लो और अपराध करके भी बच जाओ, ईश्वर की नजर से न बच सकोगे। तो ईश्वर को हमने एक बहुत बड़े न्यायाधीश के रूप में निरूपित कर दिया, डराने के लिए।

इस मनोविज्ञान को समझना। चूंकि जैसे हर बच्चा बचपन से गुजरता है, ऐसे ही मनुष्य जाति भी एक बचकानेपन से गुजरी है। अलग-अलग प्रकार के धर्म। एक शब्द आपने सुना होगा, गॉड फियरिंग, ईश्वर भीरू। हमने लोगों को परमात्मा से प्रेम करना नहीं सिखाया, परमात्मा से डरना सिखाया कि ईश्वर से डरो। महात्मा गांधी कहा करते थे कि मैं किसी से नहीं डरता, सिर्फ ईश्वर से डरता हूं। यह भय पैदा करने वाले धर्म उत्पन्न हुए। इनकी भी एक समय जरूरत थी। आपको कई बार अपने बच्चे को कहना पड़ता है झूठी बात। व चॉकलेट खा रहा है, आप कहते हैं दांत खराब हो जाएंगे। लेकिन यह बात कहने से कि चॉकलेट से दांत

खराब हो जाएंगे वह नहीं मानने वाला। हमको कहना पड़ता है कि अगर चॉकलेट खाओगे तो हवा बाबा आ जाएगा और पकड़ कर ले जाएगा। हवा बाबा के नाम से डरता है बच्चा। दांत खराब होने से बच्चा नहीं डरता, उसको पता ही नहीं कि दांत खराब क्या होता है। लेकिन वह हवा बाबा आएगा और रात को उठाकर ले जाएगा तुम्हें, इस बात से जरूर डर जाता है वह। ठीक ऐसे ही भय केन्द्रित धर्मों का उदय हुआ।

तो पहला धर्म था अज्ञान केन्द्रित, दूसरे धर्म हुए भय केन्द्रित। इसके बाद आए तीसरे प्रकार के धर्म, लोभ केन्द्रित, ग्रीड ओरिएंटेड। कुछ लोग हैं जो डरते नहीं, उनके साथ क्या करो। उनको कुछ प्रलोभन देना होगा। कुछ लालच, कुछ लोभ कि अगर हमारी बात मानोगे तो तुम स्वर्ग जाओगे। वहां ये ये सुविधाएं हैं, अप्सराएं हैं, कल्पवृक्ष हैं, शराब के चश्मे बह रहे हैं, बिल्कुल एयरकंडीशंड है पूरा स्वर्ग, सुख ही सुख बरस रहे हैं वहां। बस, ये थोड़ी सी बातें जो हम कह रहे हैं यह मान लो। बड़ा सस्ता सौदा है। फिर पंडित-पुरोहित, साधु-संन्यासी लोगों से जो-जो करवाना चाहते थे वह-वह करवा लिया। निश्चित रूप से ब्राह्मण यही कहेंगे कि ब्राह्मण को दान दो तो स्वर्ग मिलेगा। उनका अपना बिजनेस है, इसमे धर्म-वर्म का कुछ भी लेना-देना नहीं। जैन मुनि समझाता है कि जैन मुनि की सेवा करो, उससे स्वर्ग मिलेगा। वह नहीं कहता कि ब्राह्मण को दान देने से मिलेगा। निश्चित रूप से ईसाइ पादरी कहेगा के चर्च में दान देने से स्वर्ग मिलेगा। वह किसी से नहीं कहेगा कि काशी में जाकर तुम दान देना। उसका अपना बिजनेस है, उसका अपना प्रलोभन है। वह लालच दे रहा है, मेरी बात मानो, मेरे धर्मग्रंथ को मानो, इससे तुम्हें पुरस्कार मिलेगा।

तो दूसरे प्रकार का धर्म भयकेन्द्रित और तीसरे प्रकार का धर्म लोभकेन्द्रित। ये दोनों ही टेकनीक दण्ड और पुरस्कार की, फियर एण्ड ग्रीड, ये दोनों टेकनीक मनुष्य जाति को कंट्रोल करने के लिए की गईं।

हम बच्चों से कहते हैं ठीक से पढ़ाई करो, अच्छे नंबर आ जाएंगे हम अगले साल तुमको मोटर साईकल दिला देंगे। अब बच्चे को फिजिक्स, केमेस्ट्री की किताब में कोई रस नहीं है, लेकिन मोटर

साईकिल में रस है। वह बेचारा मोटर साईकिल की वजह से फिजिक्स, केमेस्ट्री की किताब पढ़ जाता है। इस मनोविज्ञान का प्रयोग पुराने धर्मों ने किया। वे आदमी को कह रहे थे कि मंदिर में दान दो। उस आदमी को तो बिल्कुल रस नहीं था मंदिर में दान देने से, बिल्कुल लोभी या कंजूस था वह। लेकिन हमने उससे कहा कि स्वर्ग में अप्सराएं मिलेंगी, उर्वशी और मेनका तुम्हारा इंतजार कर रही हैं। इसमें उसको बहुत इंट्रेस्ट था कि उनकी उम्र बस 16 साल से अधिक बढ़ती ही नहीं। वैसे तो पृथ्वी पर भी महिलाओं की उम्र बहुत धीरे-धीरे बढ़ती है।

एक दिन मुल्ला नसरुद्दीन मुझसे कह रहा था कि पिछले 20 सालों से अकेले बूढ़ा होते-होते मैं थक गया हूं। मैं समझा नहीं; मैंने कहा अकेले बूढ़े होते-होते? उसने कहा हां, मेरी तो हर साल एक साल उमर बढ़ जाती है, पत्नी की तो 5-6 साल में एक साल की बढ़ती है।

स्त्रियां कोशिश तो यहां भी करती हैं, मगर बेचारी सफल नहीं हो पातीं। मुश्किल है, खूब उपाय करती हैं। इतने सौंदर्य प्रसाधन, पूरा टी. वी. और अखबार और मैग्जीन, उन्हीं के एडवरटाइजमेंट, उन्हीं के बल पर चल रहे हैं। दुनिया की बड़ी-बड़ी फैक्ट्रियां सिर्फ सौंदर्य प्रसाधन पर चल रही हैं उमर घटाने वाली। फिर भी असफल हो जाती हैं। कोई बात नहीं, घबड़ाओ नहीं, वहां 16 साल की सुंदर कन्याएं मिलेंगी। जिनको पसीना भी नहीं आता, बदबू भी नहीं आती और कभी उनकी उम्र नहीं बढ़ती।

अभी मैं कल ही एक चुटकुला पढ़ रहा था कि जानते हैं अमेरिका में कोई भी महिला आजतक राष्ट्रपति क्यों नहीं बन पायी? इसका उत्तर था- क्योंकि अमेरिका में संविधान है कि 35 साल से ऊपर का व्यक्ति ही चुनाव लड़ सकता है तो महिलाएं काहे को 35 के ऊपर होने वाली। कोई अपनी उमर डिक्लेयर करेगी 35 के ऊपर। इसलिए अमेरिका में कभी कोई महिला राष्ट्रपति नहीं बन पाएगी।

यहां तो लोग बूढ़े हो जा रहे हैं, बीमार हो जा रहे हैं, कुरूप हो जा रहे हैं। फ्रिक न करो, स्वर्ग में कल्पवृक्ष लगे हैं। उनके नीचे बैठकर जो भी कामना करोगे तुरंत पूरी हो जाएगी। तो लोभ केन्द्रित धर्मों का उदय

हुआ। तुम यहां क्रियाकाण्ड करो, दान दो, पूजा करो, मनौती करो, मंत्रपाठ करो, यह करो, वह करो और तुम्हारी सारी इच्छाएं पूरी हो जाएंगी। वह जो सांसारिक इच्छाओं वाला मन था, लोभी और लालची उसने सोचा यह ठीक है। परलोक का भी इंतजाम कर लिया जाए और मामला कुछ मंहगा नहीं है, थोड़ा-बहुत ही करना है। और ये पण्डित, पुरोहित कह रहे हैं, यहां तुम एक पैसा दोगे, वहां दस लाख मिलेंगे। यह तो लाटरी से भी ऊपर बात हो गई। इतने तो लाटरी में भी नहीं मिलते। लगता है कि दे ही दो एक पैसा दान। नहीं भी मिला तो कोई बात नहीं, मिलेंगे तो दस लाख मिलेंगे। सीधे स्टेट बैंक ऑफ स्वर्ग में दस लाख मिल जाएंगे एक पैसे के बदले में। सौदा करने जैसा है। इस ब्राह्मण की बात मान ही लो, एक पैसा इसको दे ही दो। लोभ केन्द्रित धर्म पैदा हुए। इसका मनोविज्ञान तो है, इसमें कोई वैज्ञानिकता नहीं है। यह लालच, यह लोभ, यह भविष्य में मिलने वाला पुरस्कार और उनके बदले अपनी बात मनवाने की जिद्द।

आओ एक भजन सुनते हैं, शायद आपको ख्याल में आए कि ये लोभ केन्द्रित धर्म कैसे हैं? प्रभु से हम कुछ मांगते हैं। हे प्रभु! हमें यह दे-दे, हे प्रभु! हमें वह दे-दे। पहले हमने कल्पना की कि कोई प्रभु है, महादाता है। फिर हम मांगने बैठ गए, भिखमंगे हो गए, प्रार्थना करने लगे। ये प्रार्थनाएं झूठी हैं, इनको सुनने वाला कहीं कोई नहीं है।

प्रभु हमपे कृपा करना, प्रभु हमपे दया करना।
बैकुन्ठ तो यही है, हृदय में रहा करना।
प्रभु हमपे कृपा करना, प्रभु हमपे दया करना।
गूजेंगे नाद बनकर वीणा के तार मन में
प्रगटो हे नाथ मेरे हृदय में प्यार बनकर,
प्रगटो हे नाथ मेरे हृदय में प्यार बनकर।
हर राग इन्हीं की धुन में, बन के उठा करना।
प्रभु हमपे कृपा करना, प्रभु हमपे दया करना।
बैकुन्ठ तो यही है, हृदय में रहा करना।
प्रभु हमपे कृपा करना, प्रभु हमपे दया करना।
प्रभु हमपे कृपा करना, प्रभु हमपे दया करना।

तो पहला अज्ञान केन्द्रित, दूसरा भय केन्द्रित और तीसरा लोभ केन्द्रित। मांगना, हे प्रभु! यह दे-दे, हे प्रभु! वह दे-दे। मंदिर, मस्जिद, चर्चों में जाकर लोगों की प्रार्थनाएं सुनो, सब भिखमंगे हैं। मांग रहे हैं, भिखारी प्रवृत्ति इनकी। हरिओम शरण जी का ही एक दूसरा भजन है -

'दाता एक राम, भिखारी सारी दुनिया।'

कोई हमें देने वाला है, कोई हम पर कृपा करने वाला है यह बात हमारे मन को बड़ी सांत्वना देती है। यदि इस धारणा को आप गिरा दें, आपको लगेगा कि आपके पैरों के नीचे की जमीन खिसक गई। लेकिन याद रखना, यह वही बचकानी बुद्धि की बात है। वह टेडीवियर छाती से हम चिपकाए हैं। हमें पता है कहीं कोई ऐसा नहीं है जो हमारी प्रार्थनाएं सुन रहा हो। आज तक कोई प्रार्थना कभी पूरी नहीं हुई। कभी-कभार हो जाती है तो संयोगवश। अब समझो सौ आदमी मंदिर गए और कहा कि हम मुकदमा जीत जाएं, हे प्रभु! कृपा करना। निश्चित रूप से 50 तो जीतेंगे ही मैथमेटिक्स के हिसाब से। दो-दो आदमी लड़ रहे हैं मुकदमा तो 100 में से 50 तो पक्का जीतेंगे। यह समझेंगे कि इनकी प्रार्थना पूरी हो गई, ईश्वर ने दया कर दी। नहीं, किसी ने दया नहीं की, संयोग की बात। तो यह प्रार्थना वाले धर्म, लोभ केन्द्रित धर्म, कुछ मांगने के भाव से।

चौथा प्रवचन

मूर्च्छा, मनोरोग, पीड़ा और बौद्धिक ज्ञान केन्द्रित धर्म

मुख्य बिन्दु :

- सांत्वना : एक प्रकार का नशा है
- आत्म पीड़क धर्म : मनोरोग की निशानी
- पाप और पुण्य : गलत धारणाएं
- शोषण, चालाकी, पर-पीड़ा : गलत धर्म के आधार
- शास्त्र एवं चिंतन-मनन का धर्म

चौथे प्रकार का धर्म है- जिसको हम कहें एक प्रकार का नशा। कार्ल मार्क्स ने कहा है कि धर्म अफीम के नशे हैं। और उसकी बात 99 प्रतिशत बिल्कुल सही है। तथाकथित धर्मों ने मूर्च्छा पैदा की है। जिसको मैं कहूंगा मूर्च्छा केन्द्रित धर्म। इसलिए आश्चर्य नहीं है कि साधु-संन्यासी गांजा, भांग, अफीम, चरस, शराब, यहां तक कि सांप से

भी अपने आप को कटवाते हैं। उस जहर का भी प्रयोग करते हैं। क्यों ये साधु-संन्यासी इतने नशेड़ी, भंगेड़ी और गंजेड़ी हो गए। दम मारो दम, मिट जाए गम। क्योंकि ये धर्म करीब-करीब उनको इसी प्रकार का सिद्धांत दे रहा है, जो उनको सांत्वना दे देते हैं। एक आदमी सुंदर है, एक आदमी कुरूप है। वे सवाल उठाते हैं कि ऐसा क्यों है? इससे बड़ी बेचैनी है, तकलीफ है उस कुरूप आदमी को। हम उससे कह देते हैं एक सिद्धांत की बात कि पिछले जन्मों में तुमने कुछ खराब कर्म किए होंगे, इसलिए तुम बीमार हो, कुरूप हो और जिसने अच्छे कर्म किए थे परमात्मा ने उसको सुंदर, स्वस्थ और समृद्ध बनाया है। यह हमने अफीम का एक डोज दे दिया, मार्फिन का एक इंजेक्शन लगा दिया। वह अपनी कुरूपता से, अपनी दरिद्रता से, अपनी बीमारी से संतुष्ट होगया। अफीम का इंजेक्शन देने से कोई तकलीफ दूर नहीं हो जाती, सिर्फ तकलीफ का पता चलना बंद हो जाता है। तकलीफ नहीं मिटती, बीमारी नहीं मिटती। बीमारी तो वहीं के वहीं है, लेकिन पता चलना बंद हो जाता है। तो चौथे प्रकार का धर्म इस प्रकार के सिद्धांतों से भरा है जो हमें सुला दें। शामक, ट्रंकुलाइजन का काम है उनका। हमारे मन में कोई प्रश्न खड़ा होता है वे हमें सांत्वना दे देते हैं। किसी की मृत्यु हो गई, हम कहते हैं कोई बात नहीं, पुनर्जन्म का सिद्धांत। फिर उसका जन्म होगा। यह बात बड़ी तसल्ली देती है कि फिर से जन्म होगा। यद्यपि कुछ हमें पता नहीं पुनर्जन्म के बारे में, न जो कह रहा है उसको पता है।

तुम्हारे घर में किसी की मृत्यु हो गई, पड़ोसी आकर कहता है कि भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है - आत्मा तो अजर-अमर है। शस्त्र उसे भेद नहीं सकते, अग्नि उसे जला नहीं सकती। तुम बड़े प्रसन्न हो गए सुनके। तसल्ली मिली कि चलो। पिताजी की मृत्यु हो गई, कोई बात नहीं, आत्मा तो अमर है, शरीर ही मरा। वह जो सज्जन उपदेश देने आपको आए हैं पड़ोसी, जब इनकी बीबी मरे तब यह रोते हुए मिलेंगे आपको। तब आपको जाकर उनसे कहना पड़ेगा कि भाई धीरज रखो, आत्मा अमर है। न उनको पता है आत्मा का, न

अमरता का पता है, न आपको पता है लेकिन हम एक-दूसरे को सांत्वना दे देते हैं, पड़ोसी धर्म निभा देते हैं। तो धर्म इस प्रकार के सिद्धांतों से ग्रसित हुए। जो सांत्वना देने वाले हैं, मूर्छित करने वाले हैं। कोई चीज जो हमें चौंका रही थी, जगा रही थी, बेचैन कर रही थी, हमारे लिए कष्ट और तकलीफ का कारण थी। हम एक ऐसा सिद्धांत बता देते हैं कि वह आदमी सो जाए चैन की नींद। इसको मैं कह रहा हूं मूर्च्छा केन्द्रित धर्म। मार्क्स जिसे कह रहा है अफीम का नशा। जो ज्योतिषी बैठा है वह क्या कर रहा है? वह कुल मिलाकर आपको सांत्वना दे रहा है। आपको कोई तकलीफ है तो वह कहता है कि आपकी हस्तरेखा में ऐसा है और आप राजी हो गए। न उसे पता है हस्तरेखा के बारे में, न आपको पता है, न हस्तरेखा से कुछ लेना-देना है। लेकिन वह कोई भी बात आपसे मनवा लेगा हस्तरेखा के नाम पर। जन्मकुण्डली देख कर वह बता देगा कि ये पति-पत्नी संग क्यों नहीं रह पा रहे हैं? लड़ाई-झगड़ा क्यों हो रहा है इनका? इनकी कुण्डली ठीक से नहीं मिली थी- ग्रह नक्षत्र। अब ग्रह नक्षत्र तो अरबों-खरबों मील दूर हैं तुम क्या कर लोगे।

यह पण्डित फिर शोषण करेगा कि कोई बात नहीं, हम ग्रह नक्षत्रों को बदलवा देंगे। इनके खुद घर में जाकर देखो, इनका भी पत्नी से झगड़ा होता है। यह अपने ग्रह नक्षत्र सुधार नहीं पाए, ये तुम्हारा शनि का फेरा कैसे दूर कर देंगे? शोषण का एक इंतजाम है। लेकिन आपको तसल्ली हो गई कि ज्योतिषी जी कुछ इंतजाम कर रहे हैं। वे सवा सौ रुपये मांगे हैं, चलो घर में शान्ति हो जाएगी। शान्ति न उनके घर में होगी, न आपके घर में होगी।। मगर कम से कम थोड़ी देर के लिए चलो आपके मन में तो शांति हो गई। झूठी शांति। कुछ परिवर्तन नहीं हुआ परिस्थिति का, लेकिन मन में आपके सांत्वना मिली कि चलो कुछ तो कर रहे हैं हम। कुछ तो इंतजाम किया जा रहा है। कुछ पूजा-पाठ, सत्यनारायण की कथा हो जाए, सब मामला सुधर जाएगा। पण्डित जी ऐसा कह रहे हैं। इसको मैं कहता हूं, मूर्च्छा केन्द्रित धर्म। ये हमें सुला

देते हैं। हमारी तकलीफ दूर नहीं होती, सिर्फ हम तकलीफ को थोड़ी देर के लिए भूल जाते हैं। इसके बाद पांचवे प्रकार के धर्म हैं जिनको मैं कहता हूं मनोरोग, मानसिक रोग पर केन्द्रित धर्म। कहीं कोई साइकोलॉजिकल इलनेस हमारे भीतर है। वे इलनेस हैं हमारे भीतर गिल्ट की, फीलिंग, अपराधबोध, हम पापी हैं, हम गलत हैं और इससे मुक्त होने की चाहत। आओ एक भजन सुनते हैं, फिर मैं आगे इसकी व्याख्या करता हूं। हरिओम शरण का भजन है। जरा गौर से सुनना।

मैली चादर ओढ़ के कैसे द्वार तिहारे आऊं।
हे पावन परमेश्वर मेरे, मन ही मन शरमाऊं।
मैली चादर ओढ़ के कैसे द्वार तिहारे आऊं।
तूने मुझको जग में भेजा निर्मल देकर काया,
आकर के संसार में मैंने इसको दाग लगाया।
जनम-जनम की मैली चादर कैसे दाग छुड़ाऊं।
मैली चादर ओढ़ के कैसे द्वार तिहारे आऊं।
हे पावन परमेश्वर मेरे मन ही मन शरमाऊं।
मैली चादर ओढ़ के कैसे द्वार तिहारे आऊं।
मैली चादर ओढ़ के कैसे द्वार तिहारे आऊं।

यही साधु-महात्माओं ने पहले हमें समझाया कि तुम पापी हो। यह जो तुम्हारा जनम है, यह पिछले जन्मों के दुष्कर्मों के कारण, दण्डस्वरूप इस जगत में तुम्हारा आना हुआ है। और इस आवागमन से अगर मुक्त होना है, तो फिर हमारी बात मानो। पहले इन्होंने हमारे भीतर गिल्टी पैदा किया। फिर ये कहते हैं गंगा स्नान करो, इतना पूजा-पाठ करो, इतना दान चढ़ा दो, सारे पापों से मुक्त हो जाओगे। फिर ये कहते हैं कि चर्च में जाओ, प्रायश्चित कर लो, वहां डोनेशन बाक्स में कुछ डाल दो, तुम्हारे पाप धुल जाएंगे। पहले गिल्ट पैदा करते हैं, ये गिल्ट ओरिएंटेड रिलीजन, ये एक प्रकार का मानसिक रोग पैदा करते हैं। और इसमें फिर त्याग और तपस्या, परिवार छोड़ना

और जंगल जाना, बड़ी कठिन-कठिन प्रक्रियाएं बताएंगे मैली चादर साफ करने की। पहले उन्होंने मैली चादर बताई आपकी, करो आप इसको साफ करने का उपाय। पहले अपराध बोध से भर दिया कि तुम अपराधी हो, तुम पापी हो। तुम क्षुद्रात्मा, मैं महात्मा और अब मैं बताता हूं उपाय कि तुम कैसे इस चादर को धोओ। तो दुनिया में स्वयं को पीड़ा देने वाले धर्म पैदा हुए, आत्मपीड़क। जैन मुनि हैं, नग्न खड़े हैं। ठण्ड हो, कि गर्मी हो, कि बरसात हो। क्रिश्चियनिटी में क्वेकर्स और शेकर्स नाम के दो संप्रदाय पैदा हुए। क्वेकर्स इसलिए कहते हैं कि वे लोगों को कंपा देते थे। सुबह से उठकर वे अपने आप को कोड़ा मारते हैं। पीठ लहूलुहान हो जाती है, खून ही खून टपकने लगता। तो जो लोग देखने को खड़े होते हैं, उनके हाथ-पैर कंप जाते हैं। इसलिए वे क्वेकर्स कहलाते हैं, भूकंप ले आते हैं। और शेकर्स, शेक कर देते हैं, हिला देते हैं लोगों को। ऐसे-ऐसे करतीब करते हैं- कोई साधु कांटो पे लेटा हुआ है। हरिद्वार जाकर देखना, कोई बीस साल से खड़े हुए हैं। खड़ेश्रीबाबा उनका नाम पड़ गया है। ये क्यों अपने आप को कष्ट दे रहे हैं। कोई उपवास कर रहा है, कोई अपने बाल नोच रहा है। ये कैसे साधु हैं? ये कौन सी साधना है, इनकी क्या वैज्ञानिकता है? कोई वैज्ञानिकता इसमें नहीं है। ये मनोरोगी हैं, अपने आपको पापी मान लिया इन्होंने, अब उस पाप को धोने के लिए बड़े कठिन-कठिन उपाय ये कर रहे हैं। इसमें कहीं कोई अध्यात्म नहीं है, इससे कोई आत्मा का विकास नहीं होता।

पांचवे प्रकार के जो धर्म हुए, मनोरोग केन्द्रित, गिल्ट ओरिएंटेड, अपराध बोध से भरे हुए।

और छठवे प्रकार के धर्म हैं चालाकी भरे। पालिटिक्स ओरिएंटेड। वह सिर्फ राजनीति है, उसमें धर्म नाम की कहीं कोई चीज नहीं है। धर्म के नाम पर धन कमाना है, पद कमाना है, यश कमाना है, वोटर्स बैंक इकट्ठा करना है। सिर्फ राजनीति है, बदमाशी, चालाकी। धर्म के नाम पर वोट आसानी से मिल जाएंगे, जांत-पांत के नाम पर वोट आसानी से

मिल जाएंगे, चुनाव लड़ जाएंगे, जीत जाएंगे। तो राजनेताओं ने धर्म का उपयोग करना शुरू कर दिया। उन्होंने लोगों की भावनाएं भड़काकर लोगों को लड़ाना शुरू कर दिया। हिन्दुस्तान पाकिस्तान का बंटवारा होता है, किस लिए होता है? एक अकेला हिटलर साठ लाख यहूदियों को मार डालता है, क्यों? वह बदला ले रहा है। जीसस क्राइस्ट को यहूदियों ने मारा था। साठ लाख यहूदियों को मारकर भी संतोष नहीं हुआ। दो हजार साल से निरंतर ईसाई यहूदियों को मार रहे हैं। दो हजार साल की पूरी हिस्ट्री मारकाट की कहानी है। चालाक लोग। इनको हिंसा करनी थी, इनको हिंसा करने में मजा आता है, ये परपीड़क लोग हैं।

तो पांचवा प्रकार जो धर्म था वह आत्मपीड़क लोगों का था। त्याग-तपस्या करने वाले, भगोड़े संन्यासी, घर-परिवार छोड़कर भागने वाले, असुविधाएं और दुख पैदा करने वाले।

जो छठवां प्रकार का धर्म है, यह परपीड़क लोगों का है, राजनीतिज्ञों का है। ये दूसरों को सताना चाहते हैं, शोषण करना चाहते हैं और धर्म के नाम पर आसानी से कर पाएंगे इसीलिए धर्म का बहाना बनाते हैं। सस्ती प्रसिद्धि मिल जाएगी, आसनी से वोट मिल जाएंगे, आसानी से लोग तुम्हारे पक्ष में हो जाएंगे धर्म का अगर नाम लिया तो। हमारे देश में हम रोज देखते हैं यह घटना घटते हुए। ईश्वर के नाम पर कितने झगड़े होते हैं।

मैंने सुना है, एक अमेरिकन, एक अफ्रीकन और एक हिन्दुस्तानी की कार दुर्घटना में मृत्यु हुई। तीनों परलोक पहुंचे। तीनों नेता थे। अमेरिकन ने पूछा कि हे प्रभु! हमारे देश का दुख दूर कब होगा? भगवान ने कहा कि वत्स, पचास साल और इंतजार करो। वह अमरीकी राजनेता रोने लगा, क्योंकि उसकी उम्र आलरेडी साठ साल की थी। उसने कहा कि पचास साल में दुख दूर होगा तब तक तो शायद मैं बचूंगा भी नहीं। मैं वह दिन नहीं देख पाऊंगा जब मेरा देश सुखी होगा। उसकी आंखों में आंसू आ गए।

अफ्रीकन ने पूछा कि हमारे देश में कब कृपा होगी, हम लोग कब सुखी होंगे? भगवान ने कहा कि करीब डेढ़ सौ साल लगेंगे। उस अफ्रीकी

नेता की आंखों में भी आंसू आ गए। हिन्दुस्तानी नेता ने पूछा कि प्रभु हमारा देश कब आनंद, सुख और शांति में जी पाएगा? उसकी बात सुन के ईश्वर की आंखों में आंसू आ गए। ईश्वर ने कहा कि जब तक मैं जिन्दा हूं तो नहीं हो पाएगा। तुम्हारे देश का दुख, दुर्भाग्य से मेरे ही नाम से है सब। सारा उपद्रव मेरे ही नाम से होता है। जब तक मैं ही न मर जाऊं, तब तक कुछ होने वाला नहीं है।

यह चालाकी केन्द्रित राजनीति वाले धर्म हैं, धर्म जरा भी नहीं।

इसके बाद आते हैं तक्र केन्द्रित धर्म। शास्त्र, विचार, चिंतन-मनन, लेकिन हवाई चिंतन-मनन। काल्पनिक बातों पर लड़ाई-झगड़े, बड़े सूक्ष्म सिद्धांत और फिलासफी खड़ी करते हैं। निष्कर्ष कुछ भी हाथ नहीं आता। पिछले दस साल का ज्ञात इतिहास गवाह है। फिलासफर्स लड़ते रहे हैं छोटी-छोटी बात पर, आज तक एक भी बात तय नहीं हो सकी। ये जो दार्शनिक धर्म हैं, बुद्धिवादी धर्म हैं, तक्र केन्द्रित हैं इन्होंने जगत को कोई भी योगदान नहीं दिया, सिवाय लड़ाई-झगड़े के। हां, यहां से नई दिशा जरूर शुरू हुई। तक्र केन्द्रित जब लोग हुए, यहां से विज्ञान का विकास होना शुरू हुआ। फिलासफी दो हिस्सों में धीरे-धीरे बंट गई। पिछले तीन सौ सालों में यह विभाजन हुआ। फिलासफी का एक हिस्सा फिजिक्स कहलाने लगा, दूसरा मेटाफिजिक्स। अब जो दर्शनशास्त्र है वह मेटाफिजिक्स बन गया। तो दार्शनिक धर्मों का एक योगदान मैं कहूंगा- उनमें से कुछ लोग प्रयोगवादी बने और पदार्थों पर संशोधन करने लगे, विश्लेषण करने लगे। और तब विज्ञान का जन्म यहां से शुरू हुआ। लेकिन जो हवाई चिंतन-मनन कर रहे थे मेटाफिजिक्स की, वे बिल्कुल ही फिजूल की मानसिक कवायद थी, उससे कुछ भी हाथ में आया नहीं और न कभी आ सकेगा।

पांचवां प्रवचन

वास्तविक धर्म के चार प्रकार

मुख्य बिन्दु :

- मनुष्य जाति का विकास
- योग है स्वयं के भीतर प्रयोग
- सत्, चित्, आनंद, प्रेम पर आधारित सच्चा धर्म
- विज्ञान और वास्तविक धर्म की समानताएं और असमानताएं
- जीवन के नियम की खोज

जीवन के नियम की खोज, विचार और विवेक में फर्क है। विचार विश्लेषणात्मक होते हैं, विवेक संश्लेषणात्मक होता है। विचार चीजों को खण्ड-खण्ड करके देखता है, विवेक चीज को पूर्णता में देखता है- एक प्रज्ञा पैदा होती है, समता वाली दृष्टि जन्मती है। विचार और विवेक के भेद को समझना। जब हमारा मन पूर्ण चीज को देखने लगता है, उसकी पूर्णता में, बिना खण्डित किए, जो कि बड़ा कठिन काम है तब हमारे भीतर प्रज्ञा, विजडम उत्पन्न होती है। हमारे भीतर जो संभावना है भगवत्ता को प्राप्त करने की, उस दिशा में हमारी गति होनी शुरू होती

है। सत्य की खोज इसका मुख्य बिन्दु होगा। हां, यूनान के सुकरात को हम कह सकते हैं कि वह सत्य का खोजी है। वह वास्तव में आध्यात्मिक है। चीन के लाओत्सु को हम कह सकते हैं सत्य का खोजी। महर्षि रमण को हम कह सकते हैं सत्य का खोजी। ये विवेक केन्द्रित हैं। ये विचार में नहीं पड़ रहे हैं, विचारों से निष्कर्ष हाथ नहीं आता। ये कुछ और दूसरी जगह में जाने लगे। जैसे वैज्ञानिक बाहर प्रयोग करता है, ये अपने भीतर प्रयोग करने लगे। उस प्रयोग का नाम ही योग है। तो धीरे-धीरे योग की दिशा आनी शुरू हुई और इससे समता की अवस्था उत्पन्न होती है। हमारा मन सत्य को देखता है कि सत्य में विरोधाभास इकट्ठे हैं, कनेक्टेड। जीवन और मृत्यु जुड़े हुए हैं। सौंदर्य और कुरूपता जुड़े हुए हैं। जवानी और बुढ़ापा जुड़े हुए हैं, तब हमारे भीतर से यह मोह समाप्त हो जाता है, किस में से एक बचे और दूसरा नष्ट हो जाए। तब हम पूरे को स्वीकार करते हैं, तब हम विवेकपूर्ण बनते हैं और तब हमारे भीतर समता का भाव पैदा होता है।

इसके बाद 9वें प्रकार का धर्म है, ध्यान केन्द्रित धर्म। आपने तीन शब्द सुने होंगे। सच्चिदानंद। सद्, चित और आनंद। सत्य की खोज जो कर रहा है वह विवेक केन्द्रित हुआ। उसके बाद चैतन्य की खोज, चैतन्यता की खोज। उसका नाम है ध्यान। सत्य के बाद चित की खोज आती है। मैं और कैसे चैतन्य बनूं, मैं और कैसे ज्यादा संवेदनशील बनूं, मैं कैसे द्रष्टाभाव और साक्षीभाव में डूबूं। उसका नाम है ध्यान। ध्यान का अर्थ एकाग्रता नहीं, ध्यान का अर्थ समग्रता। कंसंट्रेसन इज नाट मेडिटेशन। इसका परिणाम है शून्यता और शांति। इसको हम कहां ढूंढ़ें, कैसे ढूंढ़ें? किसी मंदिर-मस्जिद में जाने की जरूरत नहीं। सुनो कबीर साहब क्या कहते हैं-

मोको कहां ढूंढ़ो रे बंदे मैं तो तेरे पास में।
तीरथ में, न मूरत में, मंदिर में न मस्जिद में,
न काशी कैलाश में।
न जप में, न मैं तप में, न हूं व्रत उपवास में,
न क्रिया कर्म में रहता, न हूं योग संन्यास में।

खोजी होंय तो तुरतै मिलिहों, दो श्वासों के श्वांस में।
मोको कहां ढूंढ़ो रे बंदे मैं तो तेरे पास में।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, दो श्वासों के श्वांस में,
मोको कहां ढूंढ़ो रे बंदे मैं तो तेरे पास में।

कबीर साहब के वचन से बिल्कुल स्पष्ट हो गया, क्या-क्या धर्म नहीं हैं।

न मैं मंदिर, न मैं मस्जिद, न काबे कैलाश में,
न मैं बकरी, न भेड़ी, न मैं छुरी, गड़ास में,
न तो कौनौ क्रिया करम में, न जोगी बैराग में,
खोजी होय तो तुरतै मिलिहौं पल भर की तलाश में,
कहैं कबीर सुनो भाई साधो सब श्वांसों की श्वांस में।
मोको कहां ढूंढ़ो रे बंदे मैं तो तेरे पास में।

कबीर ने इंकार कर दिया जो-जो अवैज्ञानिक बातें थीं। जप-तप, क्रिया-कर्म, गंगा स्नान, तीर्थ, मंदिर-मस्जिद वे सब व्यर्थ हैं। ध्यान की बात कर रहे हैं कबीर, अपने भीतर ढूंढ़ो।

तो ध्यान केन्द्रित धर्म, धर्म का 9वां प्रकार है। इसके बाद दसवां प्रकार है ध्यान के आगे। ध्यान में शून्यता फलित होती है, शांति फलित होती है। जैसे सत्य के खोजी को समता फलित होती है, ध्यान के खोजी को शून्यता और शांति का एहसास होता है। वह अपने भीतर खोजने लगा। इसके पहले तक के जो धर्म थे वे सब बहिर्मुखी थे। ध्यान में व्यक्ति ने अपने में रमना शुरू किया। मैं तो तेरे पास में, अपने भीतर जाओ ईश्वर को अगर खोजना है।

इसके बाद एक और आठवां सोपान पतंजलि के अष्टांगिक योग में जो आता है, उसका नाम है समाधि। तो समाधि केन्द्रित धर्म ध्यान केन्द्रित धर्म से भी आगे है। भीतर जो शून्यता फलित हो गई, उसमें पूर्णता का अवतरण होता है। ओंकार और आलोक, दिव्य सुगंध और दिव्य प्रकाश, दिव्य स्वाद की अनुभूति होती है। एक दिव्य आनंद भीतर छा जाता है। समाधि का परिणाम है आनंद। समाधि का बाहर के किसी ईश्वर से, किसी मूर्तिपूजा से, किसी शास्त्र अध्ययन से, किसी सिद्धांत से, किसी विचार, किसी फिलासफी से कुछ भी लेना-देना नहीं। बल्कि उन सबसे मुक्त हो जाओ,

तब यह घटना घट पाती है।

तो भीतर के उस ओंकार को जानना, भीतर के परमात्मा को जानना समाधि कहलाता है। तो ध्यान के बाद आती है समाधि। तो विवेक केन्द्रित सत्य का परिणाम है समताभाव। आदमी को समदृष्टि उपलब्ध होती है, बड़ा संतोष घटित होता है। ध्यान का परिणाम है शांति और शून्यता, मन की शांति, पीस ऑफ माइण्ड। और समाधि का परिणाम है आनंद, प्रफुल्लता। आदमी फूल की तरह खिल जाता है।

इसके बाद एक और 11वां धर्म जिसे हम कहें, वह है करुणा केन्द्रित, प्रेम केन्द्रित, पराभक्ति। तो व्यक्ति अपने भीतर परम आनंद में लीन हो गया, उससे आनंद बाहर भी फैलने लगता है प्रेम के रूप में, करुणा के रूप में। ये प्रेम बड़ा भिन्न है। हम जिसे प्रेम कहते हैं वह तो कामवासना का ही एक रूप है। जो व्यक्ति अपने भीतर परमानंद में डूब गया, उससे एक दूसरे प्रकार का प्रेम प्रवाहित होने लगता है। ऐसा समझें, सत्य की खोज धर्म की जड़ है, ध्यान की खोज धर्म का वृक्ष है, समाधि इस वृक्ष पर लगे हुए फूल हैं और करुणा उस फूल से उड़ी हुई सुवास है, सुगंध है। तो ये जो अंतिम चार मैंने आपको गिनाए- सत्य की खोज, शांति की खोज, आनंद की खोज और करुणा उसका परिणाम। दूसरे शब्दों में विवेक, ध्यान, समाधि और प्रेम ये वास्तविक धर्म हैं, ये सच्चे अध्यात्म हैं। लेकिन जब तक हम वे जो झूठे अध्यात्म से, वे जो अवैज्ञानिक बचकानी बातें हैं उस टेडीबियर से मुक्त न हो जाएं, तब तक हम इसको समझ और पकड़ नहीं पाएंगे। थोड़ी सी बातें मैं और आपसे करना चाहूंगा पांच मिनट।

ये जो अंतिम चार असली धर्म मैंने आपसे कहे इसमें और विज्ञान में क्या-क्या समानताएं हैं उनको समझना। पहली चीज ये विश्वास की मांग नहीं करते, श्रद्धा की बात नहीं करते, एक हाइपोथेटिकल ट्रस्ट चाहिए बस। अज्ञान का स्वीकार चाहिए, मैं अज्ञानी हूं, मैं खोज में हूं, मेरी कोई मान्यता नहीं। इसमें एक विनम्रता होती है। ज्ञानी को अहंकार होता है, अज्ञानी को कैसा अहंकार। इसमें विवाद नहीं करना है, प्रयोग करना है। वैज्ञानिक विवाद नहीं करते, प्रयोग करते हैं। प्रयोग से तय हो

जाएगा। तो ध्यान और समाधि प्रयोग करने के लिए हैं। मैं आपको आमंत्रित करता हूं ओशोधारा के ध्यान समाधि में, भक्ति समाधि कार्यक्रम में आप आएं और प्रयोग करें। और मैं आज जो कह रहा हूं आप स्वयं जानें, किसी की कोई बात मानने की जरूरत नहीं। एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण लेकर खुले हृदय से आएं।

तो वैज्ञानिक विवाद में नहीं जाता, तर्कों में नहीं उलझता, प्रयोग में जाता है। प्रयोग से तय हो जाएगा। हारने जीतने का सवाल नहीं है, सत्य की खोज करना है, साधना करनी है। रेडीमेड सिद्धांत स्वीकार मत करना। सिद्ध अवस्था को पाना है, सिद्धांत नहीं स्वीकारना है। तुम्हें स्वयं सिद्ध बनना है, सिद्धांत का क्या करोगे। मानना नहीं है, जानना है, अनुमान नहीं, अनुभूति। वह दार्शनिक सिर्फ अनुमान लगा रहा है, फिलासफर, अनुभूति उसे कुछ भी नहीं। अनुमान के पीछे मत जाना, अनुभूति पर जाना। एक वैज्ञानिक चित्त का व्यक्ति हमेशा अनुभव को खोजता है। कट्टरपंथी मत बनना, खुले हृदय वाले बनना। अपने से विपरीत वाले व्यक्ति पर भी एक बार जरा गौर से सोचना-विचारना, चिंतन करना। हो सकता है उसमें कुछ सच्चाई हो। एक दम से लड़ने पर उतारू नहीं हो जाना। शास्त्रों को प्रमाण मत मानना, शास्त्रों का उपयोग करना, उससे और आगे बढ़ने के लिए। जैसे हम किताबों में पढ़ते हैं कि जो आज तक के वैज्ञानिक खोज चुके वह हम जान लें ताकि हम इसके और आगे जा सकें। हो सकता है कि इसमें से कुछ बातें गलत सिद्ध हो जाएं। ठीक ऐसे ही धर्मग्रंथों का भी उपयोग करना। उससे आगे जाने के लिए, उस पर अटकने के लिए नहीं। कृष्ण ने जो कहा है, मोहम्मद ने जो कहा है, गुरुनानक देव ने जो कहा है, जरूर सुनना, समझना, पढ़ना, चिंतन करना और इससे आगे बढ़ने की कोशिश करना। और जीवन के नियम की खोज करना। जिंदगी में कहीं कोई चमत्कार नहीं होते, यह जीवन एक परम नियम से चल रहा है उसे ही धम्म या ताओ कहा जाता है। यदि आपके मन में कहीं चमत्कार का आकर्षण है, आप बचकानी बुद्धि के हैं। जीवन के नियम की खोज में लगो। तो वैज्ञानिक भी नियम के खोज में

लगता है, बाहर के जगत का नियम। और जो सच्चा धार्मिक व्यक्ति है वह अपने अंतस के जीवन के नियम की खोज करता है।

दूसरी बात उत्तर की जल्दी मत करना, विधि से गुजरना। उत्तर को आने देना अपने आप जब आए। जिसे हम समाधि कहते हैं, उसका अर्थ है समाधान। जब तक समाधि न मिल जाए, खोजते जाना, खोजते जाना और एक सापेक्षतावाद जैसे विज्ञान में आइंस्टीन ने खोजी है, ठीक वैसे ही महावीर ने खोजा है, अध्यात्म का एक सिद्धांत, स्यातवाद, परहेप्सिज्म, वह आपके मन में ख्याल हो ताकि आप कट्टरपंथी न हो पाएं।

तो ये समानताएं हैं कुछ जो कि बाहरी विज्ञान में और वैज्ञानिक अध्यात्म में हैं, कुछ भिन्नताएं भी हैं। बहुत संक्षेप में कह रहा हूं गौर से सुनना। कुछ असमानताएं हैं धर्म में और विज्ञान में। पहली बात विज्ञान जो खोजता है वह एक सामूहिक सत्य होता है। सब लोग उसे जान सकते हैं, सार्वजनिक, सार्वभौम। धर्म का सत्य व्यक्तिगत होता है, निजी। मैंने अपने भीतर समाधि को जाना ये मेरा व्यक्तिगत ज्ञान है, इसको मैं आपके साथ शेयर नहीं कर सकता। आपने अपने हृदय में प्रेम को जाना है। आप इसको किसी के साथ शेयर नहीं कर सकते, बता नहीं सकते यह क्या है। आपका अनुभव मेरा अनुभव नहीं बन सकता। तो धर्म का ज्ञान व्यक्तिगत होता है। विज्ञान बाहर खोज करता है, धर्म भीतर खोज करता है। विज्ञान की एक परंपरा है। अगर पुराने वैज्ञानिक न हुए होते तो आज का वैज्ञानिक खड़ा भी नहीं हो सकता। यह पुरानों का सहारा लेकर, उनके कंधों पर सीढ़ी लगाकर खड़ा है। धर्म की खोज नित नूतन है। अगर बुद्ध, महावीर, कृष्ण और मोहम्मद न भी हुए हों तो भी आज हम ध्यान कर सकते हैं और समाधि में डूब सकते हैं। सामान्यतः हम सोचते हैं कि धर्म परंपरा है। मैं आपसे कहता हूं नहीं, विज्ञान परंपरा है। अगर न्यूटन नहीं हुआ, तो आइंस्टीन कभी हो ही नहीं सकता, प्लांक कभी हो ही नहीं सकता, मैक्सीवेल कभी हो ही नहीं सकता। एक परंपरा है विज्ञान की। धर्म परंपरा नहीं है, वास्तविक धर्म। आप लोग जिसे धर्म कहते हैं वह तो परंपरा है। मैं जिसे धर्म कह रहा हूं, प्रज्ञा, ध्यान, समाधि, करुणा इसकी कोई परंपरा नहीं होती। इसका

पुराने से कुछ लेना-देना नहीं, अतीत से इसका कोई भी संबंध नहीं है।

विज्ञान पदार्थ की खोज करता है, धर्म आत्मा की खोज करता है। विज्ञान स्थूल में रस लेता है, धर्म सूक्ष्म में रस लेता है। और इसलिए एक बड़ी विचित्र बात है, शुरूआत स्थूल से करता है विज्ञान और पहुंच जाता है परमाणु पर और सबएटामिकल पार्टीकल्स पर। अत्यंत क्षुद्र पर पहुंच जाता है। धर्म खोज करता है भीतर से, सूक्ष्म से और पहुंच जाता है परमात्मा पर, विराट पर, असीम पर, अरूप और निराकार पर। विज्ञान दृश्य की खोज है, धर्म द्रष्टा की खोज है। विज्ञान ज्ञेय की खोज है, धर्म ज्ञाता की खोज है। आब्जेक्टिव है साइंस, रिलीजन है सब्जेक्टिव। विश्लेषण करता है विज्ञान, संश्लेषण करता है धर्म। विज्ञान तोड़-तोड़ के चीजों को जानता है, धर्म जोड़-जोड़ कर, इसलिए तो धर्म को योग कहते हैं। योग यानि जुड़ना। इसलिए अंत में वह विराट पर पहुंच जाता है। विभाजन नहीं, योग। धर्म चीजों को इकट्ठा देखता है, जुड़ा हुआ, संयुक्त। विचार के द्वारा नहीं, निर्विचार के द्वारा। विज्ञान का उपाय है संदेह और विचार। वास्तविक धर्म का उपाय है निर्विचार की साधना, ध्यान की साधना। वैज्ञानिक केवल निरीक्षक, आब्जर्बर बनता है, धर्म भागीदार बनता है, पार्टीसिपेटिव। वह जिस ब्रह्म को जानता है उस ब्रह्म के साथ एक हो जाता है, अलग नहीं रह जाता। विज्ञान जिस चीज को जानता है, उससे दूरी बनी रहती है, सदा ही। धर्म में हम जिसे जानते हैं, उसे हम स्वयं के होने के रूप में जानते हैं। इसलिए उपनिषद के ऋषि कहते हैं अहं ब्रह्मस्मि। ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म ही हो जाता है। एकात्मीयता का अनुभव होता है। विज्ञान की खोज डायनेमिक हैं, डायलेक्टिकल हैं, अध्यात्म की खोज नानडायलेक्टिकल, निर्द्वंदता की स्थिति की है। विज्ञान थीसिस और एन्टीथीसिस के द्वारा चलता है। एक सिद्धांत खो जाता है फिर उसका विपरीत सिद्धांत बनता है, एन्टीथीसिस फिर दोनों को जोड़कर सिन्थेसिस होती है, फिर ये सिन्थेसिस फिर एक थीसिस बन जाती है। यह फिर एक एन्टीथीसिस को जन्म देती है, इस प्रकार विज्ञान की प्रगति होती है। धर्म में इस प्रकार की प्रक्रिया नहीं है। धर्म सीधा-सीधा साक्षात है, बिना किसी सिद्धांत के। विज्ञान प्रकृति पर जीतने की कोशिश करता है, एक प्रकार की सूक्ष्म हिंसा है। और इसलिए विज्ञान का अंतिम परिणाम युद्ध की सामाग्री

का निर्माण है। एटम बम, न्यूक्लियर बम और मिसाइल उनकी खोज है। विज्ञान विध्वंसात्मक है, वास्तविक अध्यात्म सृजनात्मक है, क्रियेटिव है। इसलिए धर्म परमानंद और प्रेम में ले जाता है। विज्ञान अंततः युद्ध का साधन बन जाता है क्योंकि उसकी शुरुआत ही प्रकृति को जीतने से हुई। हिंसा की भावना उसमें पहले से ही है। धर्म में हिंसक प्रवृत्ति नहीं है, नियम को जानकर उसके प्रति एक हो जाना, उसके प्रति समर्पित हो जाने की बात है। इसलिए विध्वंसात्मक है विज्ञान और सृजनात्मक है धर्म। विज्ञान उपयोग की भाषा में सोचता है, धर्म आनंद की भाषा में सोचता है। परमात्मा का कोई उपयोग नहीं है, उसका आनंद है, परमानंद है, परम शांति है, उपयोग कुछ भी नहीं। विज्ञान उपयोगी चीजों को खोजता है, धर्म आनंद की अनुभूति को खोजता है। धर्म विस्मयबोध में ले जाता है, विज्ञान अहंकार में ले जाता है, धीरे-धीरे कि मैं जानने लगा, मैं ज्ञानी हो गया। इसलिए धार्मिक व्यक्ति को हम कहते हैं मिस्टिक, ऋषि को रहस्यवादी, रहस्यविद। उसने परम रहस्य को जाना और विस्मय में डूब गया, एक प्रकार के छोटे बच्चे जैसा पुनः निर्दोष हो गया। वैज्ञानिक निर्दोष नहीं होता, वैज्ञानिक अहंकार से भर जाता है कि मैं जानता हूं।

तो विज्ञान ले जाता है अहंकार में, धर्म ले जाता है ओंकार में। और अंतिम बात कहना चाहूंगा, विज्ञान जो उत्तर खोजता है, हर उत्तर में से नए दस प्रश्न खड़े हो जाते हैं। धर्म जो खोजता है वह समाधान है, वह समाधि है, जहां व्यक्ति निष्प्रश्न हो जाता है। तो अध्यात्म में, वास्तविक अध्यात्म में और विज्ञान में कुछ समानताएं हैं वे मैंने आपसे कहीं और कुछ विषमताएं हैं वे मैंने आपसे कहीं। और जो शुरू के धर्म मैंने गिनाए, बचकाने धर्म, वे तो धर्म हैं हीं नहीं, वे तो अध्यात्म हैं हीं नहीं, उनसे कोई आत्मा का विकास नहीं होता।

तो प्यारे मित्रों, प्रज्ञा, ध्यान, समाधि और करुणा ये हैं वास्तविक धर्म। इनकी खोज में अगर आपकी उत्सुकता हो तो जरूर आप ओशोधारा के कार्यक्रम में आएं। मैं आपको निमंत्रित करता हूं। मेरे बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना उसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

छठवां प्रवचन

अपना दीपक स्वयं जलाओ

मुख्य बिन्दु :

- मन को जीतने का सरल उपाय
- भगवान है या नहीं?
- जीवन में संतोष कैसे आए?

प्रश्न- मन को जीतने का कोई सरल उपाय बताएं?

उत्तर : आप न भी पूछते सरल; तो भी मैं सरल ही बताता। मुझे कोई कठिन काम आता भी नहीं। सब उपाय बिल्कुल सरल हैं। बड़ा सरल-सा उपाय है। मन के साक्षी बनो। मन में जो भी चल रहा है, उसको चुपचाप देखते रहो। ऐसे देखो जैसे किसी और का मन हो। जैसे टेलीविजन के स्क्रीन पर कोई कहानी चल रही हो और तुम चुपचाप बैठे देखते रहते हो। तुम्हारा उससे कुछ लेना-देना नहीं। जैसे सड़क के किनारे गुजरते हुए ट्रैफिक को कभी देखो। कभी प्रयोग करना। पांच मिनट सड़क के किनारे खड़े हो जाना। सामने से लोग गुजर रहे हैं, गाड़ियां गुजर रही हैं। चुपचाप देखते रहना। निष्पक्ष। तुम्हारे मन में यह

न हो कि अरे, यह सुन्दर व्यक्ति गुजरा। काश यह थोड़ी देर रुक जाए। यह भिखमंगा कहां से आ गया? यह खूबसूरत कार आ रही है। काश ऐसी मेरे पास होती। नहीं, तुम्हारे भीतर कुछ भी न हो। चाहे सुन्दर व्यक्ति गुजरे, चाहे कुरूप, चाहे खटारा ओटो रिक्शा गुजरे, चाहे मरसडीज कार। तुम चुपचाप द्रष्टा बने देखते रहना। चाहे भैंस गुजरे, चाहे गधा। तुम्हें कुछ लेना-देना नहीं। गुजरने वालों को गुजरने दो। तुम कोई निर्णय न लो। तुम यह न कहो कि यह गधा बीच में कहा से आ गया। सड़क है सब लोग गुजरेंगे। तुम चुपचाप खड़े देखते रहो। कभी पांच मिनट यह प्रयोग करना। फिर मन के साथ भी इसी प्रयोग को करना। मन के भीतर काफी कुछ गुजर रहा है। कभी कुछ विचार आता है, कभी कोई भावना आती है, कभी कुछ, कभी कुछ। तुम चुपचाप देखते रहो, तुम कुछ भी न करो और अचानक तुम पाओगे कि एक नए बिन्दु का उदय हुआ। तुम मन के साक्षी, तुम मन के द्रष्टा बने और तब तुम मन के स्वामी बन जाते हो। तुम मन के मालिक बन जाते हो। अभी तुम मन के गुलाम हो। मन के गुलाम का अर्थ मन में जो भी कुछ गुजरता है। तुम उससे प्रभावित हो जाते हो। तुम उसके पक्ष या विपक्ष में पड़ जाते हो। तुम किसी चीज को हटाने की कोशिश करते हो। किसी चीज को आकर्षित करने की कोशिश करते हो। तुम उलझन में फंस जाते हो। काश, तुम निष्पक्ष होकर, बिना किसी निर्णय के शान्त देखते रहो तो एक अद्‌भुत घटना घटेगी। तुम्हें एक नये तत्व का पता चलेगा कि मन एक दृश्य है और मैं उसका द्रष्टा हूं और यहीं से जीत शुरू होती है। तुम मन के पार उठ गए। तुम मन से ऊपर चले गए। फिर मन तुम्हारा मालिक नहीं रह जाता। तुम उसके मालिक बन जाते हो। बड़ी सरल तरकीब है। सारे ध्यान की विधियों का सार सूत्र द्रष्टा भाव, साक्षी भाव है।

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि अगर जीवन में सब कुछ निश्चित है, तो फिर कर्म करने का क्या अभिप्राय है?

उत्तर : सीधी सी बात है फिर कर्म करना भी निश्चित होगा। प्रश्न पूछने के पहले जरा सोच तो लिया करो क्या पूछ रहे हो?

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि भगवान की वास्तविकता क्या है? क्या भगवान जैसी कोई चीज है?

उत्तर : मैं कोई उत्तर न दूंगा। क्योंकि मेरा उत्तर आपके लिए एक अंधविश्वास बन जाएगा। अगर मैं कहूं ईश्वर है या मैं कहूँ ईश्वर नहीं है, इन दोनों ही स्थितियों में आप मेरा उधार उत्तर पकड़ लेंगे। वह उधार उत्तर किसी काम न आएगा। सवाल यह नहीं है कि ईश्वर है या नहीं; और दूसरे का उत्तर कभी भी आपको सन्तोष प्रदान न करेगा। मुझे भूख लगती है, मैं भोजन करता हूँ, तब मेरा पेट भरता है। मेरे भोजन करने से आपका पेट नहीं भरता। मेरे पानी पीने से आपकी प्यास नहीं बुझती और पानी के बारे में कितना ही समझाऊं, उससे आपकी प्यास नहीं बुझेगी। ईश्वर के बारे में मेरा कुछ भी कहना कोई मायने नहीं रखता। आप पहले ही बहुत कुछ सुन-समझ चुके हैं। इतना तो सुना है आपने बचपन से आज तक। जब वह काम नहीं आया। मैं घंटे भर के लिए आया हूँ; मेरी बात किस काम की होगी। आप चालीस-पचास साल से कुछ तो सुनते आ रहे हैं ईश्वर के बारे में। जब पचास साल काम न आए। मेरे पचास मिनट क्या काम आएंगे? एक बात पक्की है- दूसरों का अनुभव हमारा अनुभव नहीं बनता। अगर हमें भूख है, हमें स्वयं ही भोजन की तलाश करनी होगी। अगर हमें प्यास है, हम खुद ही पानी को ढूढें और खुद ही पानी को पीए तब जाकर प्यास बुझेगी। मैं आपसे नहीं कहता कि ईश्वर है या नहीं; मैं तो आपसे कहता हूं कि खोज करो। खोजी बनो। संत कबीरदास कहते हैं-

जिन खोजा, तिन पाइया।

जो खोजते हैं वे पाते हैं। आप क्या पाओगे, मैं कह नहीं सकता। हो सकता है आप पाओ कि ईश्वर है। हो सकता है आप पाओ कि ईश्वर नहीं है। खोजने से ही पता चलेगा। किसी की बात मानना मत। जैसे मैंने पहले कहा धर्म के मामले में सबसे बड़ा अटकाव और बाधा आदर्श है। उसी प्रकार दूसरी बात कहना चाहता हूँ धर्म के मामले में सबसे बड़ी बाधा पूर्वाग्रह से भरी हुई धारणा। हम पहले ही मान लेते हैं कि कुछ ऐसा है। आधी दुनिया आस्तिक है वे मानते हैं ईश्वर है।

आधी दुनिया नास्तिक है वे मानते हैं ईश्वर नहीं है। लेकिन इन आस्तिकों और नास्तिकों के जीवन में कोई भेद नहीं है। वह आस्तिक भी वैसा ही बेईमान है, जैसा नास्तिक। वह आस्तिक भी वैसा ही अपराध करता है जैसा नास्तिक। उस आस्तिक को भी वैसा ही क्रोध आता है जैसा नास्तिक को। इनकी आस्तिकता, नास्तिकता की कीमत क्या है? वह जो आदमी पूजा करता है उसके अन्दर भी वैसा ही लोभ है, वैसी ही कामवासना है, वैसी ही ईर्ष्या है; जैसी उसके मन में जो पूजा प्रार्थना नहीं करता है। इनकी ईश्वर की धारणा से इनके जीवन में कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ। ये धारणाएँ दो कौड़ी की भी नहीं। इसलिए मैं जानबूझ कर कोई उत्तर न दूंगा। क्योंकि मेरी कही बात आपके लिए सिर्फ धारणा होगी। एक अंधविश्वास होगी। अंधविश्वास काम नहीं आएंगे; आपको स्वयं खोजना होगा। अगर ईश्वर होगा तो जरूर मिल जाएगा। नहीं होगा तो इस तथ्य का उद्घाटन होगा। तथ्य का पता चलेगा। जो आपको पता चलेगा वह आपके जीवन में क्रान्ति लाएगा। इसलिए कृपया दूसरों से न पूछें। जैसा मैंने कहा दूसरों को आदर्श न बनाएं। दूसरी बात कहना चाहता हूं कि दूसरों के उधार उत्तर भी कभी काम नहीं आते।

अभी-अभी मैंने आपको हर्मन हैश की कहानी कही सिद्धार्थ की। सिद्धार्थ लौट गया गौतम बुद्ध के पास से। उसने स्वयं खोजा और पाया। तुम भी खोजो। मुझे नहीं पता भगवान है कि नहीं। अगर मुझे पता है, वह मेरा व्यक्तिगत अनुभव होगा। वह आपके काम नहीं आ सकेगा। लैला-मजनू ने बहुत प्रेम किया था। लेकिन उनका प्रेम आपके काम नहीं आता। आपको स्वयं ही प्रेम करना होता है। जीवन का कोई भी कीमती अनुभव हमें स्वयं ही जानना होता है। किताब पढ़कर हम नहीं समझ सकते कि प्रेम क्या होता है? कितने ही बड़े-बड़े कवियों ने सुन्दर-सुन्दर कविताएं लिखी हैं प्रेम के ऊपर। क्या उन कविताओं को पढ़कर प्रेम का कोई अनुभव हो सकता है? नहीं हो सकता। अनुभव से ही गुजरना होगा। तैरने के ऊपर किताबें लिखी हों; पढ़ लें आप। उससे तैरना नहीं सीख पाएंगे। स्वयं ही तैरना होगा, तभी तैरना

सीख पाएंगे। किताब पढ़कर तैरना कहां सीखोगे। नदी में ही उतरना पड़ेगा। ठीक इसी प्रकार दूसरों के कोई उत्तर काम के नहीं। कम से कम जीवन के जो महत्वपूर्ण अनुभव हैं, आंतरिक अनुभव हैं; उसमें तो बिल्कुल काम के नहीं। बाहर के जगत में काम के हो सकते हैं। न्यूटन ने ग्रेविटेशन का नियम खोज लिया; अब हमको दुबारा खोजने की जरूरत नहीं है। वह बाहर के जगत की एक घटना है। वह कोई आंतरिक अनुभव नहीं है। हम मिडल स्कूल में, हाई स्कूल में न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त पढ़ लेते हैं और हम समझ जाते हैं। न्यूटन को खोजने में सालों लगे थे। और शिक्षक ने आधे घण्टे में, एक घण्टे में समझा दिया। न्यूटन की जिन्दगी भर की मेहनत एक घन्टे में हम समझ गए बात खत्म हो गईं।

विज्ञान बाहर से सीखा जा सकता है। धर्म बाहर से नहीं सीखा जा सकता। धर्म आंतरिक अनुभव है। विज्ञान बाहर के जगत की घटना है। गणित बाहर से सीख सकते हो, भाषा बाहर से सीख सकते हो, व्याकरण सीख सकते हो। सब चीजें बाहर जो स्कूल कॉलेज में सिखाई जाती हैं, वे बाहर के जगत की घटनाएं हैं। आंतरिक जगत में कुछ भी नहीं सीखा जा सकता। कोई आपको प्रेम नहीं सीखा सकता, कोई आपको प्रार्थना नहीं सीखा सकता। कोई आपको परमात्मा नहीं सीखा सकता। कोई आपको मन की शांति क्या होती है यह नहीं बता सकता? करुणा क्या होती है? इसकी कोई ट्रेनिंग नहीं हो सकती प्रशिक्षण। वह आपके भीतर से ही उमगे तो उमगे। न उमगे तो न उमगे। प्रेम हवा का झौंका है। खिड़की में से आ जाए तो आ जाए; न आए तो न आए। उस पर कोई जोर जबरदस्ती नहीं हो सकती। बस हम इतना ही कर सकते हैं कि खिड़की खोलकर रखें। वही मैं आपसे कह रहा हूँ परमात्मा के प्रति खिड़की खोलकर रखें, खोजी बनें। खोज भरी आँखों से भीतर झांके, देखें। देखें ईश्वर है कि नहीं। अगर मिल जाए तो वह आपका न होगा। नहीं मिले तो वह भी आपका अनुभव होगा। वह प्रामाणिक अथेन्टिक होगा उसकी कोई कीमत है। दूसरों के सुने सुनाए उत्तर किताबों में पढ़े उत्तर काम न आएंगे।

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि मेरे पास जिन्दगी में बाहर से सबकुछ मिला है धन-दौलत है, बड़ा मकान है, घर-गृहस्थी है। फिर भी संतोष नहीं है। जिन्दगी में सन्तुष्टि कैसे मिले?

सुनो यह गीत-

ऊपर ऊपर खुशहाल जिन्दगी, भीतर बिल्कुल कंगाल जिन्दगी।
अधरों पर मुस्कान, हृदय में घाव, झूठ का जाल जिन्दगी।
बचपन, यौवन और बुढ़ापा, तीन ऋतु की जिन्दगी।
झूले से लेकर अर्थी तक, भेड़ों जैसी चाल जिन्दगी।
कहीं पर हमला, कहीं सुरक्षा, तीर बनी कभी ढ़ाल जिन्दगी।
मकड़ी फँसी अपने ही जाल में, वाह गजब जंजाल जिन्दगी।
भाग-दौड़, स्पर्धा, हिंसा, झगड़ा झाँसा बवाल जिन्दगी।
बहुत रफु, पैबन्द लगाए, रही मगर फटे हाल जिन्दगी।
बाल की खाल उधेड़ी फिर भी, उत्तर रहित सवाल जिन्दगी।
आँधी तूफाँ भूंचाल जिन्दगी, अन्त काल को गाल जिन्दगी।
अभी जली की अभी बुझी बस, क्षणभंगुर मशाल जिन्दगी।
बड़ी हाल-बेहाल जिन्दगी, आँसु भरा रूमाल जिन्दगी।

सामान्यतः हमारी जिन्दगी की कहानी यही है। ऊपर-ऊपर हमने बड़ा इन्तजाम कर लिया। बड़ी सफलताए हासिल कर लीं और भीतर हम बिल्कुल दरिद्र हैं। बाहर की हमारी संपन्नता भीतर की विपन्नता को मिटा नहीं पाती। बाहर की सम्पदा भीतर की विपदा को समाप्त नहीं कर पाती। बल्कि उल्टा होता है। बाहर जब सम्पदा हो तो भीतर की विपदा और भी कॉन्ट्रास्ट में उभर कर दिखाई देती है। गरीब आदमी को तो लगता है कि कभी अमीर हो जाऊँगा फिर बड़े मज़े से रहूँगा। अमीर आदमी की बड़ी मुसीबत अब उसकी कोई आशा भी नहीं। जो अमीरी हो सकती है, वह हो गई और भीतर कोई शान्ति नहीं, कोई चैन नहीं। इसलिए गरीब आदमी तो फिर भी आशा में जी लेता है। अमीर आदमी की आशा नष्ट हो जाती है। लेकिन इसको दुर्भाग्य मत समझना। यही सौभाग्य का क्षण है। जब बाहर तुम्हारे पास सब कुछ है। तब वहाँ से भीतर की खोज शुरू हो सकती है। बाहर तो तुमने सब पा कर देख लिया। हाथ खाली के खाली हैं। अब

जरा भीतर तलाश करो। अपने भीतर मुड़ो। अन्तर्यात्रा पर चलो। एक आश्चर्य की बात भारत जब सोने की चिड़िया था। तब भारत आध्यात्मिक रूप से भी बड़े शिखरों पर चढ़ा था। आज पश्चिम के देश संपन्नता की ऊंचाइयों पर हैं और इसलिए पश्चिम के देशों में धर्म की बड़ी प्यास पैदा हो रही है। भारत के बच्चे विज्ञान सीखने के पीछे पड़े हैं। उनको कम्पयूटर साइन्टिस्ट बनना है, उनको अमेरिका जाना है। अमेरिकन लोग अध्यात्म की खोज करने के लिए भारत में आ रहे हैं। आज स्थिति पलट गईं केवल सम्पन्न समाज ही धार्मिक समाज हो सकता है। क्योंकि संपन्नता के कॉन्ट्रास्ट में उस पृष्ठभूमि में यह स्पष्ट हो जाता है कि संपन्नता पाकर भी कुछ नहीं मिलता। ठीक बाहर सब सुन्दर हो गया, लेकिन भीतर कुरूपता नष्ट नहीं हुईं उसके लिए कुछ और करना होगा। इसलिए जोरबा दी बुद्धा की शिक्षा ओशो की बड़ी महत्वपूर्ण है। बुद्ध स्वयं भी उन्नतीस साल की उमर तक जोरबा की जिन्दगी ही जिए थे। राजकुमार थे। बाहर की संपन्नता सुन्दर है उसका उपयोग करो। क्योंकि उसके बाद ही ख्याल में आता है कि भीतर भी कुछ खोजना है। इस परिस्थिति का सदुपयोग कर लो।

सातवां प्रवचन

साधन और साध्य

मुख्य बिन्दु :

- आनंद और भय
- मन के पार है परमानंद
- मोक्ष का इंतजाम मृत्यु से पहले करें
- प्रेम में हताशा और निराशा
- साध्य और साधन का भेद

प्रश्न- आज्ञा चक्र पर और सहस्त्रार पर ऊर्जा इकट्ठी होने से आनन्द में कुछ कमी महसूस हो रही है और हल्का सा तनाव भी महसूस हो रहा है क्या करूँ?

उत्तर : आपसे निवेदन है नाभि चक्र पर ध्यान को केन्द्रित करें। धीमी गहरी साँस लें। कभी छोटा सा अन्तर्कुम्भक- कभी रोक लो श्वास को दो-चार मिनट और अपना ध्यान पेट पर लगाएं। श्वास के साथ उठते-गिरते नाभि केन्द्र का अहसास करें। तब आप ज्यादा प्रसन्न, शान्त और आनंदित महसूस करेंगे।

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि कभी-कभी बड़ी मस्ती और आनन्द का अनुभव होता है, किन्तु भय भी लगता है। ऐसा क्यों?

उत्तर : महत्वपूर्ण सवाल है। प्रत्येक साधक के जीवन में कभी न कभी ऐसा अनुभव होगा। जहाँ आनन्द और भय एक साथ महसूस होंगे। यह इस बात का प्रमाण है कि सचमुच में आनन्द में गहराई मिल रही है। अभी हम बात कर रहे थे तैरना सीखने की। जब कोई तैरना सीखने जाता है तो उथले पानी में घुटने तक के पानी में तैरना सीखने जाता है। वहाँ उसे डर नहीं लगता। क्योंकि पता है डूबने लगे खड़े हो जाएंगे। डूबने का कोई डर नहीं। फिर थोड़ी हिम्मत पड़ती है, कमर भर पानी में जाते हैं। फिर वहां हाथ-पैर चलाना सीखते हैं। अभी भी डर नहीं लगता। क्योंकि पता है कमर तक पानी है। तीन फुट डूबने का कोई सवाल नहीं है। खड़े हो जाएंगे। फिर वहां जब सीख जाते हैं थोड़ा और आत्मविश्वास, फिर आगे बढ़ते हैं। जब गले-गले पानी में जाने लगते हैं वहाँ से थोड़ा भय पकड़ता है। आगे और गहरा पानी है। अब अगर पैर फिसल गया या डुबकी लगी तो फिर खड़े नहीं हो पाएंगे। अब डूबने का खतरा पैदा हुआ। ठीक इसी प्रकार ध्यान की साधना में जब हम मन के पार जाने लगते हैं। एक सीमा तक तो हमें पता है कि हमारा वही पुराना मन मौजूद है। कभी भी हम पैर टिकाके खड़े हो जाएंगे। वापिस किनारे लौट आएंगे। लेकिन एक समय ऐसा आता है जब हम मन की सीमा को क्रास करने लगे। मन के पार उस सीमा रेखा पर पहुँच गए। वहां से भय पकड़ता है। अब अज्ञात में प्रवेश हो रहा है। पता नहीं क्या होगा? जाना-पहचाना ज्ञात लोक छूट रहा है। किनारे से बहुत दूर आए। अब अंजान हैं आगे। अज्ञात से हम भयभीत होते हैं। इसलिए इसको मैं एक अच्छा लक्षण समझता हूँ भय लगना। आनन्द भी आ रहा और भय भी लग रहा है। इसका अर्थ है अब आप मन के किनारे से दूर आ गए। अब अमन की दशा में प्रवेश होने का अवसर आ रहा है। अब हिम्मत करो अगला कदम और उठाओ। भय की कोई जरूरत नहीं। आगे और आनन्द ही आनन्द है। परम आनन्द है।

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है, इंसान की मृत्यु के बाद उनको मोक्ष प्राप्त करवाने के लिए उनका पुत्र क्या करे?

कुछ न करो आप अपना इंतजाम करो। वह जो सज्जन चले गए, वह अपना इंतजाम न कर पाए अब उनके जाने के बाद आप उनके लिए कुछ नहीं कर सकते। प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के जीवन के लिए जिम्मेवार है। यहां कोई किसी की मदद नहीं कर सकता। कोई पुत्र पिता की भी मदद नहीं कर सकता। ये सब झूठी सात्वनाएं हैं कि कुछ क्रिया काण्ड करने से पिता को मोक्ष प्राप्त हो जाएगा। उन्होंने जिन्दगी भर जो किया है उसका फल उन्हें मिलेगा। आपके करने से कुछ भी न होगा। आप जो कर रहे हो। उसका फल आपको मिलेगा। संसार में वसीयत होती है। पिता अपनी जायदाद पुत्र के नाम लिख गए। अध्यात्म के जगत में कोई वसीयतदारी नहीं होती। वहा अपनी-अपनी कमाई खुद ही करनी पड़ती है। आपके पिता अगर जीते जी मुक्त हो गए, तो ही मृत्यु के बाद कोई मुक्ति है। वर्ना कोई मुक्ति नहीं। फिर वापिस लौटकर आना होगा। मोक्ष इतना सस्ता नहीं है कि कुछ छोटे से क्रिया काण्ड कर दिए कि पूजा पाठ करवा दिया। कौओं को भोजन करवा दिया और श्राद्ध करवा दिया और पण्डितों को दान दे दिया और पिता जी का मोक्ष हो जाएगा। अगर ऐसा हो गया तब तो हमने मोक्ष को भी खरीद लिया। कुछ दस-पाँच हजार रूपये खर्च करने से अगर मोक्ष मिलता है, यह तो बड़ी खरीदारी हो गईं फिर तो साधना की कोई जरूरत नहीं। थोड़े पैसा कमाके एक ट्रस्ट बनाकर छोड़ जाओ कि हमारे मरने के बाद ऐसा-ऐसा कर देना। बस मुक्ति मिल जाएगी। दस-बीस हजार में तुम समझते हो मोक्ष मिल जाएगा। जमीन की कीमत कितनी है। बम्बई में बीस हजार रूपया स्कुएर फुट जमीन चल रही है और तुम सोच रहे हो कि दस हजार में तुम स्वर्ग पर कब्जा कर लोगे। बड़ी सस्ती टैकनीक निकाली। उसमें भी खुद नहीं करोगे उसे भी पुत्र करेगा। नहीं, धर्म बिल्कुल नकद है। स्वयं ही स्वयं के लिए कुछ किया जा सकता है, दूसरे के लिए नहीं। इसलिए व्यर्थ इस प्रकार की बातों में न उलझें।

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि मैंने जिन्दगी में प्रेम लेने और देने की बहुत कोशिश की। किन्तु हमेशा मैं ठुकराया गया या मुझे धोखा दिया गया। ऐसा क्यों?

उत्तर : संसार का नियम ऐसा ही है। अगर यहां तुम्हारी प्रेम की चाहत पूरी हो जाए। तो फिर परमात्मा को कौन प्रेम करेगा? यह संसार एक पाठशाला है। यहां हमारे भीतर अभीप्सा तो है, चाहत तो है, इच्छाएँ हैं, लेकिन पूरी कोई नहीं होती। तुम कितना ही धन कमा लो, भीतर की निर्धनता नहीं मिटती। तुम कितना ही प्रेम संबंध बना लो, कोई प्रेम तृप्ति नहीं देता। संसार में प्यास है, तृप्ति का कोई उपाय नहीं। लेकिन यह दुर्भाग्य नहीं, यह तो सौभाग्य है। तभी तो हम भीतर की तरफ मुड़ेंगे। भीतर की तरफ यात्रा करेंगे। किसी कवि ने लिखा है-

कहने को सभी अपने हैं मगर, सहरा में हमारा कोई नहीं।
होठों पे खुशी के गुल हैं बहुत, खुशबू का बहारा कोई नहीं।
बाहर तो बड़ी रौनक है यहां, सामान बहुत सुख सविधा के।
अन्दर तो मगर सुनसान है सब, अपना सा बेचारा कोई नहीं।
रिश्तों से भरी इस दुनिया में, हमदर्द यहाँ दिखते हैं सभी।
जब गौर किया मालूम हुआ, सचमुच का सहारा कोई नहीं।
दामन ही नहीं हम थामें जिसे, बस्ती ही नहीं देखने को यहां।
बेकार भ्रम में खोए रहे, आनन्द का द्वारा कोई नहीं।
सब रस्ते हैं भटकाने के लिए, अटकाने के बन्दोबस्त हैं सब।
यहाँ प्यार की बातें होतीं मगर, यहाँ प्यार का मारा कोई नहीं।

संसार में केवल झलक मिलती है बस। ऐसा लगता है बस अब मिला, अब मिला। मिलता कभी भी नहीं। जैसे क्षितिज दिखाई पड़ता न। लगता है कि तीन-चार किलोमीटर दूर होगा क्षितिज जहा जमीन और आसमान मिलते हैं। बस अभी पा लेंगे थोड़ी देर में। तुम कितना ही चलो, कितना ही चलो। क्षितिज हमेशा तीन-चार किलोमीटर दूर ही रहता है। मिलता कभी नहीं। दिखाई पड़ता है। संसार में सभी चीजों के आभास हैं, झलक है, मिलता कभी किसी को भी नहीं। बड़े-बड़े

सिकन्दर और हिटलर को नहीं मिला। हम लोग तो साधरण लोग हैं। हमारी तो बात ही छोड़ दें। बड़े विश्व विजेता, राजा-महाराजा, राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री उनको कुछ न मिला। सिवाए दु:ख और फ्रस्ट्रेशन के कुछ हाथ नहीं आता। मरते समय पता चलता है कि सब व्यर्थ गया। न यहां प्रेम की आकांक्षा पूरी होती, न यहां संपत्ति की इच्छा पूरी होती, न यहां कोई शक्तिशाली हो पाता। बस भ्रम में खोए रहते हैं। लगता है कि कुछ होने वाला है। बस इतना और हो जाए। बस वह क्षितिज वाला गणित बस दो-चार किलोमीटर और। अभी हाथ आ जाएगा। कभी किसी के हाथ नहीं आया। नहीं आ सकता।

तो प्यारे मित्रों, आप से निवेदन करता हूं कि आपकी इच्छा बिल्कुल सही है। जिस दिशा में खोज रहे हैं, वह दिशा भ्रांत है। पुराने साधु-महात्मा क्या कहते हैं? वे कहते हैं तुम्हारा प्रेम गलत। घर-गृहस्थी को छोड़ भागो। मैं आपसे कहता हूं नहीं। प्रेम की चाहत बिल्कुल ठीक। लेकिन जहां तुम उसे पाने की कोशिश कर रहे हो, वहां नहीं मिलेगा। मिलेगा स्वयं के भीतर। अपनी दिशा बदलो। मैं नहीं कह रहा है कि संपत्ति की खोज में कुछ गलती है। बिल्कुल ठीक। संपत्ति की चाहत फैलाओ। आकांक्षा विराटता की इच्छा बिल्कुल सही है। लेकिन बाहर के जगत में तुम कभी भी असीम न हो सकोगे। पूरी दुनिया भी तुम्हारी हो जाए, फिर भी उसकी एक सीमा होगी। पृथ्वी है कितनी सी; इस विराट अस्तित्व में एक धूल के कण के बराबर भी नहीं।

मैंने सुना है सिकन्दर जब विश्व विजेता की यात्रा पर निकला था। डायजनोजिज नाम के एक युनानी फकीर ने उसको कहा कि सिकन्दर क्या तुम्हें ख्याल है कि एक ही पृथ्वी है बस, एक ही दुनिया है। जीतने के बाद फिर क्या करोगे? दूसरी तो कोई दुनिया है ही नहीं; और कहते हैं कि सिकन्दर यह सोचकर ही उदास हो गया। एक ही दुनिया है पूरी जीत ली फिर। फिर क्या करोगे? फिर तो बैठ कर मक्खी मारो और क्या करोगे? आखिर दुनिया की भी सीमा है। लेकिन मैं आपसे कह रहा हूं कि वह जो संपत्ति और शक्ति की आकांक्षा है, वह विराट होने की आकांक्षा है। आकांक्षा में कोई भूल नहीं है। लेकिन इस दुनिया में वह पूरी नहीं

होगी। वह होगी स्वयं के भीतर पूरी। वहां की शून्यता विराट है। शून्यता ही असीम हो सकती है। चीजों की तो सीमा होगी। बाहर के प्रेम पात्र सीमित ही होंगे। अगर तुम चाहते हो अमर और अनंत प्रेम, सचमुच में अमर प्रेम वह केवल भीतर हो सकता है। वह बाहर नहीं हो सकता। बाहर तो सब प्रेम मिट जाएंगे।

फिल्मों में गीत रहते हैं अमर प्रेम के। बस वे फिल्मों में रहते हैं। वें कवियों की कल्पनाएँ हैं। वह कभी पूरे नहीं होते, किसी के पूरे नहीं हुए। बाहर पूरा हो नहीं सकता। हम जिसे प्रेम कर रहे हैं, वह स्वयं मरणधर्मा, हम खुद मरणधर्मा, बाहर कैसे अमर प्रेम होगा। लेकिन चाहत में भूल नहीं है। तो फर्क याद रखना। पुराने साधु-महात्मा समझा रहे थे कि तुम जिसे चाह रहे हो, उसे छोड़ कर भागो। यह प्रेम की चाहत गलत है, मोह गलत है। मैं आपसे नहीं कहता कि मोह गलत है, कि प्रेम की चाह गलत है। मैं कह रहा हूँ सही जगह खोजो। तुम्हारी हालत ऐसी है कि तुम जूते की दुकान पर पहुंच कर कह रहे हो कि गुलाब जामुन क्या भाव हैं? यह गुलाब जामुन की दुकान नहीं है। तुम कह रहे हो अच्छा छोड़ो गुलाब जामुन, बर्फी का रेट बताओ? वह दुकानदार कह रहा है- यहां जूते के अलावा कुछ नहीं। ज्यादा बक-बक की तो जूते पड़ेंगे। तुम कह रहे हो अच्छा छोड़ो रस मलाई का भाव? तुम गलत जगह जा रहे हो। मैं आपसे कह रहा हूँ कि आपकी चाहत ठीक है। जरूर रस मलाई कहीं है। हलवाई की दुकान खोजनी होगी। आप गलत दुकान से सामान लेने पहुँच गए। अपने भीतर मुड़ना होगा वहां रस की धार बह रही है। उपनिषद के ऋषि कहते हैं–रसो वैसः। परम आनन्द, परम रस हमारे स्वयं के भीतर है। उसे पाने की अभीप्सा या उसे पाने की साधना का नाम ही अध्यात्म या धर्म है ओशो की दृष्टि में।

प्रश्न : एक मित्र ने पूछा है कि क्या नृत्य भी किसी प्रकार की चिकित्सा है? क्योंकि मैं वर्टिगो नामक बीमारी से पीड़ित था जो कि नृत्य करते-करते ठीक हो गई है।

उत्तर : चिकित्सा की भांति न लें, किसी चीज की तकलीफ ठीक

हो जाए तो उसको एक बाई प्रोडक्ट समझें। मैं नहीं कहूंगा जान बूझकर कि नृत्य चिकित्सा है। यद्यपि बहुत कुछ ठीक होता है। क्योंकि अगर मैं यह कहूंगा कि यह चिकित्सा है तो फिर हम उसको भी एक मीन्स की तरह, साधना की तरह उपयोग करने लगेंगे। कम से कम नृत्य को, सेलिब्रेशन को तो साध्य रहने दो, उसको तो किसी चीज का साधना नहीं बनाओ। इन दो चीजों को समझना- मीन्स एण्ड एंड्स। एक तो है साधन और एक होता है साध्य। साधन किसी चीज के लिए होता है, साध्य स्वयं अपने आप में अपनी मंजिल होता है, वह किसी और चीज के लिए नहीं है।

समझो मैं आपसे पूछूं कि क्यों कोई विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करता है? आप कहेंगे कि पढ़-लिखकर नौकरी करने के लिए। हम कहेंगे कि नौकरी क्यों करना चाहिए? ताकि धन कमा सकें। हम कहेंगे कि धन क्यों कमाना? ताकि अपना और अपने परिवारजनों का पालन-पोषण कर सकें। अब हम पूछें कि क्यों दूसरों की चिंता करना, अपनी चिंता करो? तब उत्तर मिलेगा कि हमें उनसे प्रेम है, लगाव है, अपने शरीर से भी है, अपनी पत्नी से भी है, अपने बच्चों से भी है, अपने सभी परिवारजनों से भी प्रेम करते हैं। अब हम पूछें कि प्रेम क्यों है? अब यहां जाकर बात खत्म हो जाएगी, इसका कोई उत्तर नहीं हो सकता।

शिक्षा एक साधन थी कि नौकरी मिल सके, नौकरी एक साधन थी कि धन कमा सकें, इसलिए अगर कोई आपको तरकीब बता दे कि बिना नौकरी किए भी धन कमा सकते हैं तो आप तुरंत नौकरी छोड़ दोगे। नौकरी में कोई रस नहीं था, अगर कोई बताए कि कहां पागलों जैसे इतनी मेहनत करते हो, चलो कसीनो हम बताते हैं ट्रिक बिल्कुल पक्का जीतने की तो एकदम करोड़पति बन जाओगे। आप तुरंत नौकरी छोड़ दोगे, कौन क्लर्क की नौकरी करेगा। नौकरी करना एक साधन था, वह अपने आप में साध्य नहीं था, साध्य कुछ और था। धन कमाना, लेकिन धन कमाना भी साधन है। साधन और धन एक ही मूलधातु से बने हैं। धन के द्वारा कुछ चीजें प्राप्त करनी थीं, अगर वे चीजें किसी अन्य उपाय से मिल जाएं तो धन

कमाने की भी जरूरत नहीं होगी। चोरों ने, डकैतों ने आज दूसरे उपाय खोज लिए हैं। वे उन चीजों को सीधे ही प्राप्त कर लेते हैं, बीच में धन की कोई जरूरत नहीं पड़ती। वे चीजें किस लिए? जैसे-जैसे हम साध्य की तरफ बढ़ते जा रहे हैं समझ में आ रहा है कि यह भी साधन, यह भी साधन, यह भी साधन। अंततः हम पाएंगे जीवन सबकुछ उसके लिए था। लेकिन वह किसके लिए? वह किसी के लिए भी नहीं है, वह अपने आप साध्य है। तो जो भी हायर वैल्यू हैं, चाहे वह प्रेम हो, चाहे वह जीवन हो, चाहे वह शांति हो, चाहे वह आनंद हो, चाहे वह उत्सव हो। वह किसी और चीज का साधन नहीं है और इसीलिए तो वह महान है। लेकिन हमारा मन विचित्र है, अजीब व्यवसायी दिमाग है हमारा, हम परमात्मा तक को साधन बनाकर उसका उपयोग करना चाहते हैं।

कई लोग पूछते हैं कि ध्यान करने से, परमात्मा को जानने से लाभ क्या होगा? हम कहते हैं नमस्कार, आप जाइए यहां से। यह जगह आपके लिए नहीं है। आपका बाजारू दिमाग है। हर चीज का लाभ लेना चाहते हो, कोई चीज बिना लाभ के छोड़ोगे कि नहीं। तुम परमात्मा को भी कहीं पैक करके बेच डालना चाहोगे, क्या करना चाहते हो? या एक्सपोर्ट कर दोगे। तुम तो परमात्मा का भी धंधा बना लोगे।

एक बार आनंद प्रज्ञा में मैंने एक महिला से मैंने पूछा कि आप किसलिए परमात्मा को पाना चाहते हो? वह कहने लगी कि अब स्वामी जी उम्र बढ़ गई है, पैंसठ वर्ष की हो गई हूं, शरीर साथ नहीं देता है, कमर दुखती है, यह तकलीफ, वह तकलीफ। ये सब तो मैं कर लेती हूं, लेकिन बर्तन मांजना और कपड़े धोते नहीं बनता। बस प्रभु कृपा हो जाए। एक्चुली परमात्मा की जगह पर हम एक अच्छा नौकर तलाश कर रहे हैं। कभी पति रूप में ढूंढ़ते हैं, कभी पत्नी रूप में ढूंढ़ते हैं। मंदिर, मस्जिद, चर्चों में जाकर लोगों की प्राथनाएं सुनो। इसी बात को वे खूब अच्छे शब्दों में कह रहे हैं छुपाकर, लेकिन बात इतनी ही है। यह महिला बेचारी सीधी-साधी है, तो इसने साफ-सरल शब्दों में कह दिया कि कपड़े धुलवाना, बर्तन मजवाना है। बाकी तुम प्रार्थनाएं सुनो लोगों की कि क्या प्रार्थना कर रहे हैं। कोई कह रहा है कि बेटे की नौकरी

लगवा दो, कोई कह रहा है कि हमारी बेटी की शादी हो जाए, कोई कह रहा है कि पत्नी की तबियत ठीक हो जाए, कोई कह रहा है कि हमारा इलाज हो जाए, कोई कुछ मांग रहा है। मैंने लोगों को यहां तक सुना है मांगते कि मुकदमा जितवा दे भगवान। हम परमात्मा से वकील का काम लेना चाहते हैं, डॉक्टर का काम लेना चाहते हैं, सरवेंट का काम लेना चाहते हैं। और यह तो हद हो गई कि मुकदमा। पहले तुमने कुछ अपराध किया होगा और अब परमात्मा को घूस दे रहे हो कि नारियल चढ़ाएंगे मुकदमा जितवा दो। मतलब हमारे अपराध में तुम भी संगी-साथी हो जाओ, क्या बैठे-बैठे देख रहे हो कुछ करने को न धरने को। जज का दिमाग ही फेर दो कम से कम। अरे, कुछ तो करो निठल्ले। सारी प्रार्थनाओं का सार-निचोड़ मैंने निकाला है वह दो शब्दों में आ जाता है- शिकायत और सुझाव। पहले तो शिकायत कि हे प्रभु! तुमने यह ठीक नहीं किया, वह ठीक नहीं किया, कंपलेन बाक्स समझ रखा है हमने परमात्मा को। और अगला अपनी सलाह दे दो क्योंकि परमात्मा में तो अपनी अक्ल है नहीं, हम उसको बताते हैं कि हे प्रभु! ऐसा कर। अरे, हमारी सलाह मानो, पूछ लो किसी समझदार व्यक्ति से। तुमने जो दुनिया बनाई वह तो ठीक है नहीं है।

एक बात तो पक्की है, उसके प्रति तो हम बिल्कुल कंपलेन से भरे हुए हैं, सबकुछ गलत ही गलत है। अब हम बताते हैं कि कैसा होना चाहिए। दुनिया बनाने वाले क्या तेरे मन में समाई, काहे को दुनिया बनाई। सारी प्रार्थनाएं शिकायत और सलाह हैं बस। और ये लोग अपने आपको आस्तिक समझते हैं। ये परमात्मा से भी नौकर का काम लेना चाहते हैं। जरा सोचो, क्या ये आस्तिक हैं। मैं जिंदगी में कभी आजतक मंदिर नहीं गया क्योंकि मुझे कुछ मांगना ही नहीं है, न कोई काम निकलवाना है। मैं आलरेडी मस्त हूं, मजे में हूं, परमात्मा को क्यों तकलीफ देनी। इतनी प्यारी दुनिया उसने बनाई है, अगर देना है तो उसके प्रति धन्यवाद से भरो। और जिंदगी में कुछ चीजें छोड़ दो साध्य की भांति, परमात्मा, जीवन, कि प्रेम, कि उत्सव, कि नृत्य, कि ध्यान, कि समाधि। तुम इसका उपयोग मत सोचना। यह जो यूटीलिटेरियन दृष्टि

है कि हम हर चीज का उपयोग कर लें इस पर थोड़ा विचार करना। अगर तुम्हारी यह दृष्टि है उपयोगिता वाली तब तुम बाजार में ही पहुंचोगे, भले ही तुम मंदिर जाओ। और यदि उपयोगिता वादी दृष्टि नहीं है, आनंदवादी दृष्टि है तब तुम सदा मंदिर में ही हो, तुम कहीं भी रहो। बाजार में भी फिर मंदिर हो जाता है अगर तुम उस क्षण का पूरा-पूरा आनंद ले रहे हो। इसलिए मैं नहीं कहूंगा कि नृत्य एक चिकित्सा है। नृत्य का मजा लो। ठीक है उससे अपने आप ठीक हो जाता है तो ठीक, लेकिन उसको अपने उपयोग की दृष्टि से मत देखो।

आज सुबह जब मैं मॉर्निंग वाक में जा रहा था तो पानी गिर रहा था। मुझे बड़ी खुशी हुई देखकर कि पच्चीस मित्र पानी में भीगने के लिए तैयार खड़े थे। निश्चित रूप से इनके मन में कोई उपयोगिता का ख्याल नहीं कि पैदल चलने से क्या लाभ होता है। कि महात्मा गांधी ने बताया है कि पैदल चलोगे तो लाभ होंगे। अगर लाभ की दृष्टि से चलोगे तो एक बात तो पक्की है कि फिर पैदल चलने में मजा नहीं होगा। तुम्हरी नजर इसमें लगी रहेगी कि वह लाभ होता है कि नहीं। जिस व्यक्ति को पैदल चलने में मजा है वह फिर लाभ के चक्कर में नहीं पड़ता। अगर कोई कहे भी कि हानि होगी तो वह कहेंगे कि होगी हानि, पर हमको तो बड़ा मजा आता है पैदल चलने में इसलिए चलता हूं। लाभ-हानि का ख्याल नहीं है कुछ। नाचो नाचने के लिए, ध्यान करो ध्यान करने के लिए, प्रेमपूर्ण रहो प्रेमपूर्ण रहने के लिए, ओंकार में डूबो ओंकार में डूबने के लिए। इसको साधन मत बनाना कि इससे कुछ प्राप्त हो जाएगा। छुद्र चीजें साधन बन सकती हैं। निश्चित रूप से घर में कार रखी है आपने तो इसीलिए कि आप कार में बैठकर कहीं जाएंगे। कार अपने आप में साध्य नहीं है, कार एक वाहन है, एक साधन है कहीं पहुंचने के लिए। लक्ष्य वहां पहुंचना है। साधन तो कुछ और भी हो सकता है, अगर कार से नहीं पहुंचेंगे तो स्कूटर हो सकता है, ट्रेन हो सकती है, हवाई जहाज हो सकती है, बैलगाड़ी हो सकती है, साइकिल हो सकती है, कई साधन हो सकते हैं जाने के। असली बात है वहां पहुंचना। तो छुद्र चीजें तो साधन हैं उनका उपयोग करना, लेकिन कुछ

चीजों को जीवन में कृपा करके छोड़ देना साध्य की भांति। यद्यपि हमारा व्यवसायी मन हर चीज को साधन बनाने की कोशिश करता है।

उदाहरण के लिए किसी का विवाह हुआ, अब पत्नी सोच रही पति को एक धन कमाने वाली मशीन के रूप में। पति सोच रहा है पत्नी को शरीर के उपभोग के रूप में। एक साधन को कि घर-गृहस्थी सम्हालने वाली एक नौकरानी के रूप में। फिर इनके भीतर प्रेम कभी भी विकसित नहीं हो पाएगा। इन्होंने एक-दूसरे को साधन बना लिया। मैंने लोगों को यहां तक कहते सुना है कि बच्चे होना जरूरी है ताकि पति-पत्नी आपस में जुड़े रहें। मतलब बच्चों को भी साधन की तरह इसलिए पैदा किया है कि ये लिंक हैं बीच में जोड़ने वाले। वरना वैसे तो कोई संबंध रह नहीं जाएगा। लेकिन वह बच्चा कामन है दोनों की प्रापर्टी है, वह दोनों को छोड़ने को तैयार नहीं। इसलिए उसकी वजह से आपस में जुड़े रहेंगे। जुड़े रहना बड़े मजबूरी का होगा, रोने-धोने वाला।

मैंने सुना है कि नसरुदीन और उसकी मैडम ने तलाक का मुकदमा किया था। जज ने फायनली साल भर बाद मंजूर कर लिया कि सारी संपत्ति इस प्रकार से बंट जाएगी लेकिन समस्या यह है कि आपके सात बच्चे हैं तो इनका डिवीजन कैसा होगा। नसरुद्दीन की पत्नी ने कहा कि चलो जी घर, अगले साल आएंगे तलाक के लिए। आश्चर्य! आठवां बच्चा भी पहुंच जाएगा। तलाक की नौबत है, इनका प्रेम भी एक साधन है ताकि अच्छे से तलाक हो सके। नहीं, नृत्य को किसी भी प्रकार की सृजनशीलता को साधन मत बनाना, उसको आनंद की दृष्टि से लो। वह चाहे नृत्य हो, चाहे गीत हो, चाहे कविता हो, चाहे संगीत हो, कि पेंटिंग किसी को करना हो, कि किसी को बगीचे में काम करने का शौक हो, इन चीजों को छोड़ दो अपने आप में आनंद लेने के लिए। इनका उपयोग करने की नहीं सोचना। उपयोग हो जाए वह एक अलग बात है। तुमको कविता लिखने का शौक है और कोई प्रकाशक छापने को तैयार हो जाए और हो सकता है कि उससे आपकी इनकम भी हो जाए तो ठीक, उसको एक बाई प्रोडक्ट की भांति देखना। असली बात यह थी कि आपको गीत लिखने में मजा आता था और वह आपने ले लिया।

अब वह किताब छप जाती है और उससे कोई नाम मिल जाता है वह अलग बात है। होती हो तो हो जाए, न हो तो न हो, आपने तो पूरा रस निचोड़ ही लिया। जब गीत लिख रहे थे तब आपने आनंद उठा लिया। बाद में क्या होगा उसकी चिंता नहीं।

अक्सर ऐसा हुआ है कि जो बड़े क्रिएटिव लोग हुए हैं उनकी प्रथम रचनाएं बहुत ही महत्वपूर्ण थीं। उदाहरण के लिए खलील जिब्रान की किताब 'द प्रॉफिट' अद्‌भुत किताब थी। लेकिन यह पंद्रह साल का था तब उसने लिखी थी। उसके बाद वह लंबी उम्र जिया बहुत सी किताबें लिखीं लेकिन फिर 'द प्रॉफिट' की हैसियत की दूसरी किताब नहीं आई। दूसरी किताबें भी बहुत अच्छी हैं लेकिन पहली किताब की तुलना में बिल्कुल फीकी। जब पंद्रह साल की उम्र में किताब लिखी थी तब ऐसा कोई ख्याल नहीं था कि मैं लेखक बन जाऊंगा, कि दुनिया में मेरा नाम हो जाएगा, कि मेरी किताब छपेगी, कि मेरी किताब के सारी दुनिया में अनुवाद होंगे, यह तो सोचा ही नहीं था। लेकिन एक बार जब नाम और प्रतिष्ठा मिल गई तब उसने जो दूसरी किताबें लिखी हैं वे नाम और प्रतिष्ठा में कुछ जोड़ने के लिए हैं। अब वह लेखन एक साधन बन गया कुछ और प्राप्त करने के लिए। सावधान! अगर हो सके तो धीरे-धीरे फिर इस आनंदवादी दृष्टि को दूसरी चीजों में फैलाना।

अगर तुम संगीत में, कि नृत्य में, कि पैदल चलने में, कि व्यायाम करने में साध्य की बात कुछ कर सके तो साथ में तुम्हें समझ में आएगा कि हम दूसरी चीजें जिनका कि उपयोग है, उनको भी हम आनंदपूर्वक कर सकते हैं। हमें याद आता है जब मैं हॉस्पिटल में नौकरी करता था, तो घर से एक किलोमीटर दूर था हॉस्पिटल। तो अक्सर मैं पैदल ही आता-जाता था। एक दिन मुझे ख्याल आया कि यही सड़क है, जिस पर मैं सुबह-शाम पैदल घूमने के लिए भी निकलता हूं और यही सड़क है जिस पर मैं ड्यूटी पर जा रहा हूं। वही पैर हैं, सड़क के दोनों तरफ लगे हुए वृक्ष भी वही हैं, पैरों की चलने की प्रक्रिया भी वही है लेकिन ड्यूटी जाते समय मैं एक प्रकार की बोझिलता महसूस कर रहा हूं। मार्निग वाक में बड़ा रस लेते हुए और आनंदपूर्वक चलता हूं।

चलने-चलने में भेद है। चलने की प्रक्रिया वही, दृश्य वही, सब वही है। जिस दिन मुझे यह बात ख्याल आई मेरे भीतर अचानक कुछ क्लिक हुआ। चलते-चलते मुझे ख्याल आया कि अभी मैं अपनी मनस्थिति को परिवर्तित करूं और मैं वैसा ही चलूं जैसा कि सुबह चल रहा था। मुझे कौन रोक सकता है इस बात से कि मैं आनंदपूर्वक चलूं। ठीक है ड्यूटी करने जा रहा हूं, नौकरी कर रहा हूं लेकिन आनंदपूर्वक चलने में क्या कठिनाई है। जैसे ही यह बात ख्याल में आई अचानक मैंने पाया कि मेरी चाल जैसे बदल गई।

जब उस चलने का मैंने सुख लिया तब फिर मुझे दूसरा ख्याल आया कि यदि मरीजों को भी मैं इसी प्रकार से देखूंगा जैसे कोई बड़ा भारी उत्सव चल रहा है, इसको काम की तरह, नौकरी की तरह, कि मजबूरी है, लाचारी है क्या करो, देखने ही पड़ेंगे अगर सैलरी प्राप्त करनी है तो इस ढंग से नहीं लूंगा, इसको मैं सैलीब्रेशन की तरह लूंगा कि अहा! अस्तित्व ने मुझे एक मौका दिया है, अपना प्रेम किस प्रकार जाहिर करने का कि किसी की सेवा करके, कि किसी का इलाज करके इस भांति इसको लूंगा। फिर वह ख्याल बीच-बीच में बार-बार आता रहा, फिर जैसे-जैसे दिन गुजरते गए फिर मैंने नौकरी को नौकरी की भांति नहीं किया। फिर मैंने उसको खूब एन्ज्वाय किया। तनख्वाह मिलती थी लेकिन मैं उसको बोनस के रूप में समझता था कि मजा तो मैंने पूरा ले ही लिया, आश्चर्य यह है कि ये लोग तनख्वाह भी दे रहे हैं। फिर धीरे-धीरे हमने अपने जीवन के सारे कार्यों में इस बात को फैलाया। सिर्फ हमारी दृष्टि की ही तो यह बात है, कोई बाधा वाली बात थोड़ी है। तो मैं आपसे इसलिए नहीं कह रहा हूं कि नृत्य चिकित्सा है।

कई लोग पूछते हैं कि नृत्य करने से कुछ सेहत में लाभ होगा कि नहीं? मैं हमेशा कह देता हूं कि नहीं होगा। यद्यपि होता है, लेकिन फिर भी यही कहता हूं कि नहीं होता है। कहने से वह ध्यान को भी साधन बना लेते हैं। फिर वे कहेंगे कि अच्छा तो फिर हम शांत बैठ जाते हैं। लेकिन याद रखना, यह व्यक्ति शांत होगा कैसे, इसकी नजर तो फ्यूचर

में अटकी हुई है, भविष्योन्मुख नजर है उसकी कि ऐसा-ऐसा इससे होना चाहिए। फिर यह वर्तमान के क्षण में आ ही नहीं पाएगा, यह ध्यानस्थ हो ही नहीं पाएगा। इसके विचार आगे की खोपड़ी में चलते रहेंगे आगे की। ध्यानस्थ तो वह हो सकता है जो वर्तमान के समय में जीने की कला सीख ले। जो व्यक्ति भविष्योन्मुख है वह तो तनाव से भर गया, वह तो शांत और शिथिल हो ही नहीं पाएगा, ध्यान में वह जा ही नहीं पाएगा। वह कोशिश जरूर कर रहा है, लेकिन होने वाला कुछ भी नहीं, उसकी कोशिश व्यर्थ जाएगी। तो पुनः निवेदन करता हूं कि जो भी चीजें जीवन में हायर वैल्यूज हैं उन्हें हायर वैल्यूज ही रहने देना, उनको किसी चीज का साधन मत बनाना, वे अपने आप में साध्य हैं।

परमगुरु ओशो के पिताजी एवं माताजी

आठवां प्रवचन

साधना संबंधी सवाल

मुख्य बिन्दु :

- समाधि की पहचान
- भाव की महत्ता
- पूर्व अनुभवों में भटकन
- मेरे संग हमेशा बुरा ही क्यों?

प्रश्न : कैसे पता चले कि समाधि सही लगी है?

उत्तर : दो तीन उपाय, प्रमाण उसको समझने में सहयोगी होंगे, जब समाधि लगेगी तो लगभग नींद जैसी अवस्था है जागरूकता के साथ। बस एक छोटा सा भेद है सुषुप्ति और समाधि में, गहरी नींद में जहां सपने भी खो जाते हैं उस सुषुप्ति में और समाधि में बस एक भेद है। समाधि में होश रहता है, नींद में हम बेहोश हो जाते हैं। अन्यथा सारे लक्षण वैसे ही हैं। वही रिलैक्सेशन, वही मन का चुप हो जाना, विचारों का, सपनों का खो जाना, वही आनंद, ताजगी, शिथिलता, शांति। सुबह उठकर आप कहते हैं कि आज बहुत स्फूर्ति और ताजगी लग रही है, खूब अच्छी नींद आई। किसी दिन आप कहते हैं कि आज सुबह से थका-मांदा हूं

रात नींद ठीक से नहीं हो पाई। अर्थात वो जो स्फूर्ति और आनंद सुबह महसूस होता है वो गहरी निद्रा में प्राप्त होता है। कभी-कभी रात ऐसा होता है कि रातभर सपने चलते रहते हैं। वो गहरी नींद का क्षण आता ही नहीं इसलिए सुबह भी थके-मांदे उठते हैं। जैसे रातभर टेलीविजन देखते रहे हों। इसका मतलब आनंद का स्रोत गहरी नींद की अवस्था है। समाधि में शांति और आनंद की अनुभूति होगी ठीक वैसी ही जैसी नींद में होती है। मन के ठहर जाने की प्रतीति होगी। नींद में सपने रुक जाते हैं, दिन में समाधि में डूबकर विचार रुक जाएंगे। टाइमलेसनेस की अनुभूति, समयहीनता प्रतीत होगी।

बाइबिल में एक वचन आता है, ईसामसीह से किसी ने पूछा कि आप जिस प्रभु के राज्य की चर्चा करते हैं उसमें सबसे खास बात क्या होगी? ईसामसीह ने जो उत्तर दिया बड़ा अद्भुत था और बड़ा विचित्र सा है। ईसामसीह ने कहा कि प्रभु के राज्य में समय नहीं होगा। समय का एहसास दुख का एहसास है। आप ख्याल करना, जब कभी आप उदास होते हैं, चिंतित होते हैं, दुखी होते हैं तो ऐसा लगता है कि समय बहुत लंबा हो गया। जब आप खुश होते हैं तब समय सिकुड़ जाता है। अक्सर लोग कहते हैं कि सुख क्षणभंगुर होते हैं उनकी यह बात गलत है। सुख क्षणभंगुर लगता है। होते तो सुख और दुख बराबर हैं, दोनों में संतुलन है लेकिन दुख खूब लंबा लगता है और सुख बहुत छोटा लगता है। कारण, सुख में समय सिकुड़ जाता है और दुख में समय बहुत लंबा हो जाता है। आप जरा कल्पना करें कि आपका प्रियजन या मित्र मृत्यु शैया पर है, आप उसके बगल में बैठे हैं रात, डॉक्टरों ने जवाब दे दिया है कि अब कुछ नहीं हो सकता, बस थोड़ी देर और हैं। उस निराशा की अवस्था में, दुख की अवस्था में क्या रात वैसे ही लगेगी जैसी रोज लगती थी? आपका प्रिय व्यक्ति सदा-सदा के लिए बिछुड़ने वाला है अब दुबारा उससे कभी मिलना न होगा, ऐसे में ये रात बहुत लंबी हो जाएगी, ऐसा लगेगा कि खत्म ही नहीं हो रही है। आप बार-बार घड़ी देख रहे हैं कि मामला क्या है, घड़ी बंद तो नहीं हो गई, इतनी देर हो गई अभी आधे घण्टे ही बीते बस, अभी तो चालीस मिनट ही हुए।

इसका ठीक विपरीत कल्पना करिए, समझो किसी को ताश खेलने का शौक है और चार दोस्त बैठकर रात ताश खेल रहे हैं। अब कब सुबह हो जाती है उनको पता ही नहीं चलता है। ऐसे में समय सिकुड़ गया क्योंकि चित्त प्रसन्न था। तो समय कोई फिक्स वस्तु नहीं है, हम लोग सामान्यतः सोचते हैं कि समय कोई निश्चित चीज है, कि घड़ी का कांटा चल रहा है एक निश्चित गति से। नहीं, समय वैसा नहीं है। समय फिजिकल इवेंट नहीं, सायकोलाजिकल इवेंट है। भौतिक कम, मानसिक ज्यादा। यह हम सबका अनुभव है कि दुख में समय लंबा हो जाता है, सुख में छोटा हो जाता है तो हम कल्पना कर सकते हैं कि परमानंद में क्या होगा? समय विलीन ही हो जाएगा। टाइमलेसनेस की अनुभूति होगी। तो वह समाधि का प्रमाण है कि समाधि सही लगी है।

प्रश्न : क्या अनहद नाद भी साधन है? सोहम, अजपा, क्या इनमें साधन संबंध है? ये सत्य को अनावृत्त करने में किस प्रकार सहायक हैं समझाएं?

उत्तर : परमात्मा के मार्ग पर मार्ग को भी मंजिल ही मानें। इनको साधन की भांति न लें। ये स्वयं अपने आप में साध्य हैं। ऐसा मत सोचना कि ओंकार में डूब-डूबकर कुछ प्राप्त होगा, ओंकार में डूबना आनंदपूर्ण हो ऐसी भावदशा निर्मित करिए। अगर आपके मन में यह ख्याल है कि ओंकार की ध्वनि सुन ली अब इसके द्वारा कुछ प्राप्त करेंगे तब आपने फिर परमात्मा का भी उपयोग करने की सोचने लगे। फिर बाजार आ गया, मंदिर नहीं आया। नहीं, ओंकार अपने आप में ही साध्य है।

प्रश्न : क्या जो हृदय से जीने वाला व्यक्ति है वह परमात्मा की ओर जाता है?

उत्तर : हां, मन की वजाय जो लोग हृदयपूर्वक, भावपूर्वक, प्रेमपूर्वक जीते हैं उनके लिए ज्यादा आसान है परमात्मा में डूब जाना। जो लोग खोपड़ी में, गुणाभाग में, हिसाब-किताब में जीते हैं उनके लिए बहुत मुश्किल है। मन बाजार है, हृदय मंदिर है संक्षिप्त में ऐसा

समझो। इसलिए भाव से जुड़ो। इसलिए हम यहां इतना जोर देते हैं नृत्य पर, गायन पर, उत्सव पर। नाचो, गाओ, झूमो ताकि तुम भाव के तल पर आ जाओ। जो खोपड़ी है थोड़ी देर के लिए बंद हो जाए तब परमात्मा में डुबकी आसान होगी। जो लोग केवल हिसाब-किताब की दुनिया में जी रहे हैं, धन कमाना, पद कमाना और ज्ञान, प्रतिष्ठा हासिल करना और ऊंची डिग्रियां प्राप्त करना, प्रमोशन पाना कि राजनीति में जाना ऐसा जिनका मन है उनके लिए भीतर के मंदिर में प्रवेश द्वार नहीं खुलते। उस मन को लेकर मंदिर में प्रवेश हो ही नहीं सकता। इसलिए ठीक आपने पूछा है कि क्या हृदयपूर्ण व्यक्ति परमात्मा की ओर उन्मुख होता है? हां होता है।

प्रश्न : आज प्रातः संजीवनी मंत्र के दौरान एक तरफ मन, ओशो द्वारा पूर्व में दिए गए अनुभवों में ही भटकता रहा तथा ओशो के प्रति अहोभाव से भरा रहा जिससे मैं संजीवनी मंत्र ठीक से नहीं कर पाया। क्या अनुभवों में भटकना उचित है?

उत्तर : आपका प्रश्न ही बता रहा है, अगर भटकना उचित होता तो यह सवाल पूछते ही नहीं। आज तक किसी आदमी ने डॉक्टर से जाकर नहीं पूछा कि क्या स्वस्थ होना ठीक है? नहीं, जब बीमारी होती है, तकलीफ होती है तभी सवाल उठता है कि ये क्या हो रहा है, क्यों हो रहा है। जब आप अनुभव में भटक रहे हैं तो आप अतीत की स्मृति में डोल रहे हैं। भविष्य और अतीत दोनों मन के हिस्से हैं, वर्तमान का क्षण प्रभु प्रवेश का द्वार है। अनुभवों की स्मृति में नहीं जाना है। आप फिर प्रभु मंदिर से चूक जाएंगे, वो अभी इसी क्षण है। आप अतीत के अनुभवों में गए तो भी चूक गए। आपका प्रश्न ही पर्याप्त प्रमाण है।

प्रश्न : मेरे साथ हमेशा बुरा क्यों होता है?

उत्तर : कोई आदमी हरा चश्मा पहने हो और कहे कि मैं जहां भी जाता हूं मुझे सब चीजें हरी क्यों नजर आती हैं। तुम्हारी दृष्टि में कहीं दोष है। यह तुम्हारी व्याख्या है कि यह जो घटना घटी, यह बुरी है या

अच्छी, विधायक दृष्टिकोण वाला व्यक्ति हर चीज को इस भांति लेता है कि उसे चीजें अच्छी नजर आती हैं। निगेटिव दृष्टिकोण वाला व्यक्ति हर चीज में बुराई ही खोजता है। अपनी नजर को बदलो। हम घटनाओं को बदलने चलते हैं और आज तक कोई उन्हें बदलने में सफल नहीं हो पाया। आप हरा चश्मा पहने हुए और चले कि मुझे जहां भी हरा दिखाई देगा वहां सफेद पेंट कर दूंगा। कितना भी पेंट करते रहो, लेकिन तुमको हरा ही दिखाई देगा। यह तो ऐसा ही है कि जैसे आप सिनेमा देखने टाकीज में जाते हैं तो पर्दे पर दृश्य नजर आते हैं। सामने कहानी चल रही है। लेकिन प्रोजेक्टर पीछे छिपा हुआ है, वहां से फिल्म प्रोजेक्ट की जा रही है पर्दे पर। सामान्यतः प्रोजेक्टर की तरफ हमारी नजर कभी नहीं जाती, वह हमारे पीछे होता है और हम सामने दृश्य में उलझ जाते हैं। फिर अगर हमको फिल्म पसंद न आए तो हम पर्दा बदलने की कोशिश करते हैं। प्रोजेक्टर को नहीं बदलते, वहां जो फिल्म चल रही है उसको नहीं बदलते, उस पर तो हमारा ध्यान ही नहीं है कि कारण वहां है असली।

हम इफेक्ट को बदलने की कोशिश करते हैं, काज को नहीं। एक आदमी अपने मकान में दुखी है और अब चला वह मंदिर। वह पर्दा बदल रहा है, मकान के पर्दे की जगह मंदिर का पर्दा। वह पहले परेशान था- अपने बेटे, बहू, बेटियों से, नाती-पोतों से और अब त्याग करके संन्यासी हो गया। अब वहां शिष्य-शिष्याएं इकट्ठे हो गए, पर्दा बदल गया। अब वह शिष्य-शिष्याओं के बीच में दुःखी होगा, दुःखी तो पक्का होगा। बल्कि पहले तो कुछ गिनती में कमी थी। दो-चार बेटा-बेटी थे, पोता-पोती सब मिलाकर कुल दस-बारह होंगे; क्योंकि परिवार नियोजन वाले पीछे पड़े होते हैं, वे होने ही नहीं देते ज्यादा। शिष्य-शिष्याओं में तो गिनती का कोई प्रतिबंध ही नहीं है, क्योंकि सरकार ने कोई प्रतिबंध नहीं लगाया है कि कितने होने चाहिए। जब चार बेटे-बेटियों ने रुला दिया था और अब तुम चार लाख शिष्य-शिष्याएं पैदा करोगे तो सोच लो क्या दुर्गति होगी। और प्रोजेक्टर तुम्हारा वही का वही है। प्रोजेक्टर है अहंकार का कि लोग मेरी बात मानें। वह परिवार के दस-पांच लोग

नहीं मान रहे थे तो तुम दुःखी हो रहे थे, इस प्रोजेक्टर को लेकर तुम भागे कि पर्दा बदला जाए, यह पर्दा ठीक नहीं है परिवार वालों का, दूसरा पर्दा लग गया शिष्य-शिष्याओं का। और तुम अपना प्रोजेक्टर लेकर वहां बैठ गए। अब तो और मुसीबत में फंसोगे। सावधान, पर्दा बदलने से कुछ नहीं होगा। यह प्रोजेक्टर हमारी खोपड़ी के अंदर फिट है, हम जहां जाते हैं वह हमारे साथ ही चला जाता है। तुम क्या सोचते हो, जो आदमी वहां गांव में केस-मुकदमा लड़ रहा था जमीन जायदाद के लिए, कि एक फुट जमीन उस तरफ की मेरी है, यह आदमी जंगल में जाकर शांत हो जाएगा क्या?

जरा सोचो, एक साधु बाबा जंगल में बैठे हुए कहीं पानी पीने गए, तब तक उनके पेड़ के नीचे आकर एक दूसरा साधु बैठ गया। वह आकर दूसरे का सिर फोड़ देगा कि अरे, यह तो हमारा पेड़ है, आप कहां से आ गए। यह आदमी वही है जो गांव में कहता था कि यह मेरी जमीन है, जो यहां आकर कह रहा है कि पेड़ हमारा है, तुम यहां आकर कैसे बैठ गए, उठो। वह कहेगा कि पेड़ क्या किसी का होता है जंगल में? पहला वाला कहेगा कि बीस साल से हम यहां बैठ रहे हैं। अगर ज्यादा तर्क-वितर्क किया तो झगड़ा हो जाएगा। यह आदमी वही का वही है झगड़ालू प्रवृत्ति का। इसको तो झगड़ा करना ही है, कहीं न कहीं तो करेगा। पहले वह घर के मुकदमा लड़ता था अब वह आश्रम का मुकदमा लड़ेगा, उसको तो लड़ने में मजा आता है। कहीं न कहीं वह लड़ेगा, किसी न किसी से भिडंत होगी। वह तो ढूंढ़ता फिर रहा है कि आ बैल मुझे मार। तो बैलों की कोई कमी है क्या? वह भी ढूंढ़ते फिर रहे हैं कि कौन हमें बुलाता है। वे तो बिना बुलाए ही मारने को तैयार हैं, आमंत्रण दो तब तो क्या कहना। सावधान, अगर तुम्हें लगता है कि तुम्हारे साथ हमेशा बुरा होता है तो तुम्हारा दृष्टिकोण बहुत ही नकारात्मक है। कोई घटना अच्छी या बुरी नहीं होती, यह हमारे देखने का नजरिया होता है। गौतम बुद्ध अपने अष्टांगिक मार्ग में सबसे पहली बात यही कहते हैं, सम्यक दृष्टि, राइट पैराडिग्म। सम्यक होना तो बहुत ऊपर की बात है, कम से कम निगेटिव से पॉजिटिव में तो आओ। इनको त्रिकोण

के तीन बिन्दुओं की भांति देखना, नीचे के दो कोण हैं निगेटिव और पॉजिटिव एटीट्यूड, नकारात्मक और सकारात्मक दृष्टि। और ऊपर का शीर्ष कोण है सम्यक दृष्टि। दोनों के पार, बियाण्ड द डुअलिटी। इसको ऐसा समझो कि एक तरफ स्वर्ग, एक तरफ नर्क और ऊपर है मोक्ष। कम से कम नर्क से स्वर्ग में तो आ जाओ, इतनी तो समझदारी दिखाओ। अगर इतनी समझदारी तुमने दिखा दी तो स्वर्ग से ऊपर भी छलांग लग जाएगी, मोक्ष में भी गति हो सकेगी। लेकिन जो व्यक्ति नर्क में जी रहा है वह कितना नासमझ है, उसका तो मोक्ष में पहुंचने का कोई उपाय नहीं। तो त्रिकोण देखने में लगता है कि तीनों बिन्दु बराबर दूरी पर हैं एक-दूसरे से, किन्तु नर्क से होकर मोक्ष को कोई रास्ता नहीं जाता। स्वर्ग से होकर मार्ग जाता है मोक्ष में। तो नर्क से पहले स्वर्ग पर आओ, नकारात्मक दृष्टि से पहले विधायक दृष्टि वाले बनो तब धीरे-धीरे और भी ऊपर उठ सकोगे, सम्यक दृष्टि को पार हो सकोगे। तब शांति और आनंद की संपदा तुम्हारी होगी। धन्यवाद।
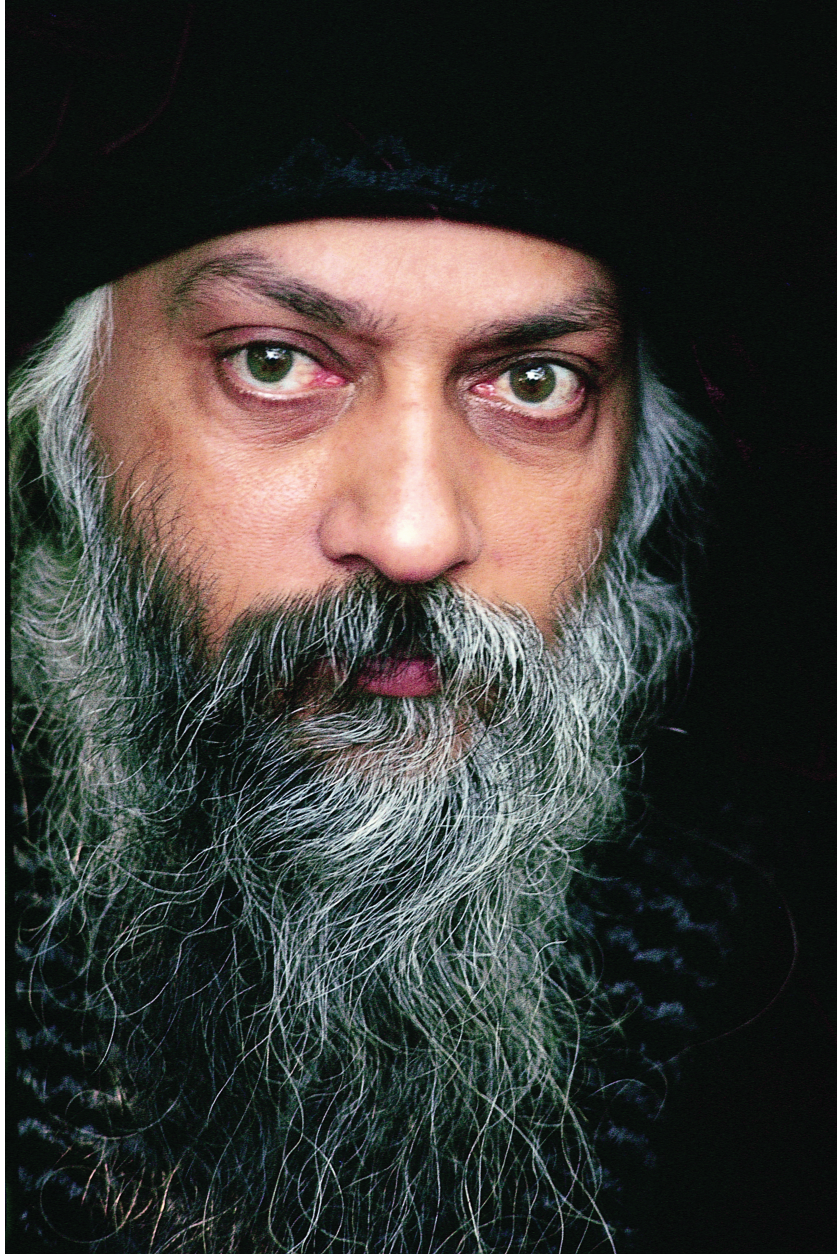
नौवां प्रचवन

साधना और भगवान की वास्तविकता, आनंद और प्रेम

मुख्य बिन्दु :

- साधना कहां करनी चाहिए?
- आध्यात्मिक राह पर भटकाव
- आदर्श अटकाने का सबसे बड़ा कारण
- घर-गृहस्थी में रहते हुए संन्यासी बनो

प्रश्न : साधना कहाँ करनी चाहिए?

उत्तर : साधना सबसे अच्छी तो अपने घर में ही होती है। किन्तु शुरुआत में सीखने के लिए बेहतर हो कि हम किसी आश्रम में जहाँ गुरु का सानिध्य प्राप्त है, जहाँ साधकों का संघ बहुत से मित्र हैं, सब एक दिशा में चल रहे हैं वहाँ पर उपयोगी होगा। आपके मन में कोई प्रश्न आया आप पूछ सकते हैं। कोई आपसे दो कदम आगे है। वह आपको कोई सलाह दे सकता है। उसकी सलाह काम आ जाएगी। हॉस्टल में आप रह रहे हैं पढ़ाई के लिए, आपसे कोई सीनियर है एक क्लास

आपसे आगे है, आपसे कोई गणित नहीं बन रहा आपके सीनियर मित्र आपकी मदद कर देंगे। आप किसी के काम आ जाएंगे। कोई आपसे जूनियर है। मिलजुल कर जब हम चलेंगे तो रास्ता आसान हो जाएगा। फिर हर चीज का एक माहौल बनता है। शराब घर में शराबी इकट्ठे होते हैं तो एक खास माहौल में बिना शराब पीए भी चढ़ जाएगी नए आदमी को। अस्पताल का एक खास माहौल है। बीमार भर्ती हैं, आप वहाँ किसी से मिलने जाते हैं आप भी थके-मांदे लौटते हैं। जैसे आपकी ऊर्जा चूस ली गई हो। वहाँ एक खास वातावरण था।

ठीक इसी प्रकार हम जिनको तीर्थ स्थान कहते हैं, साधना स्थल कहते हैं वे विशेष प्रकार की ऊर्जा से चार्जड आविष्ट स्थान हैं। वहाँ पर एक खास दिशा में यात्रा करना सरल होगा। लेकिन याद रखना, ये तो शुरुआत के सबक, बाद में तो अपने घर में, अपने एकांत में ही साधना करनी है। तो शुरुआत के लिए उपयोगी है। निश्चित रूप से समझदार व्यक्ति को हर चीज का उपयोग कर लेना चाहिए। कहीं से कोई मदद हमें मिलती हो तो हम उसको ले लें। फिर हम अपने बलबूते चलें।

जैसे छोटा बच्चा माँ की उंगली पकड़ कर चलता है। सहारा तो मिल जाता है। उसे विश्वास है कि माँ उंगली पकड़े है गिरने नहीं देगी, हिम्मत करता है खड़े होने की, चलना शुरू करता है। फिर धीरे-धीरे माँ अपनी उंगली छुड़ाने लगती है। अब तुम अपने पैर से खुद चलो। किसी ने आपको तैरना सिखाया हो तो आपको याद हो कि तैरना सिखाने वाला क्या करता है। कुछ खास नहीं करता। वह नदी या स्वीमिंग पुल के किनारे ले जाकर कहता है कि उतरो पानी में। हाथ-पाँव चलाओ मैं खड़ा हूँ यहाँ पर। अगर कोई समस्या होगी तो मैं छलाँग लगाकर तुरन्त आपकी मदद करूँगा। उसके खड़े होने से हमको विश्वास हो जाता है। जरूरत शायद कभी नहीं पड़ती। हम खुद पानी में उतरते हैं हाथ-पैर फड़फड़ाते हैं शुरुआत में। उल्टा-सीधा हाथ-पैर फेंकते हैं। दो-चार दिन में जरा तरकीब से तैरना सीख जाते हैं। लेकिन एक व्यक्ति खड़ा है किनारे। उस पर हमें श्रद्धा है। उसका खड़ा होना बड़ा काम आता है। वर्ना हमारी हिम्मत ही न पड़ती पानी में उतरने की।

ठीक ऐसे ही गुरु का काम है, ठीक ऐसे ही आश्रम का काम है, ठीक ऐसे ही साधक संघ का, मित्रों का काम है। उनकी उपस्थिति हमारे लिए प्रोत्साहन बन जाती है। करना कुछ नहीं पड़ता किसी को, करते सब कुछ आप ही हैं लेकिन उनकी मौजूदगी में बात आसान हो जाती है। अकेले में कठिन हो जाएगी। हाँ, मुश्किल क्या हो होती है, जब आपको तैरना सीखते-सीखते दस दिन बीत गए और फिर भी आप कहो अपने शिक्षक से कि वहां खड़े रहो किनारे तभी तैरेंगे यह फिर गलती हो गई। अब आपने तैरना सीख लिया। अब अकेले तैरो। शिक्षक का काम पूरा हुआ। ठीक इसी प्रकार आध्यात्मिक गुरु का काम होता है। शुरुआत में थोड़ी सी मदद और मदद भी कुछ ज्यादा नहीं बस, भरोसा। उसके भरोसे तुम तैरने लगोगे, ध्यान में डूबने लगोगे। फिर गुरु धीरे-धीरे अपना हाथ छुड़ा लेगा। वह कहेगा बॉय-बॉय। अब तुम खुद डूबो, अपनी यात्रा स्वयं करो।

प्रश्न- आध्यात्मिक जगत में ऐसी कौन-सी कमियाँ हैं या रास्ते में मिलने वाली खामियाँ हैं जो हमें भटकाव और धर्म से दूर करती हैं?

उत्तर : सबसे बड़ी जो भूल है, वह यह है कि हमारा लक्ष्य हमसे कहीं दूर है। भटकने का सबसे बड़ा कारण। हम स्वयं ही स्वयं के लक्ष्य हैं। ओशो का एक वचन मुझे याद आता है- 'धन्य हैं वे जो स्वयं को खोजते, स्वयं को पाते और स्वयं ही हो जाते। फिर से रिपीट कर दूँ। गौर से सुनना, ओशो कहते हैं- 'धन्य हैं वे जो स्वयं को खोजते, स्वयं को पाते और स्वयं ही हो जाते।' सारी आध्यात्मिक यात्रा का लक्ष्य बस यही है। अपने स्वभाव को उघाड़ना। वह जो हमने परिवार से, समाज से, शिक्षा से, दुनिया से जो हमने सीख लिया है। जो पर्त हमारे ऊपर जम गई है शिक्षा की, संस्कारों की उसे हटाना। अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानना। इसलिए भटकाव क्या हो सकता है? भटकाव यह हो सकता है कि हम सदा बाहर से मिलने वाली सूचनाओं का इकट्ठा करते रहे। हम अपने लक्ष्य को कुछ और समझें। हम किसी को आदर्श बना लें। हम उसके जैसे होने की कोशिश करें। यह बड़े से बड़ा

भटकाव का कारण है। आप ही अपने आदर्श हो कोई और नहीं। आपको राम या कृष्ण जैसा नहीं बनना है, न आपको गांधी या विनोवा जैसा बनना है, न आपको विवेकानन्द बनना है, न आपको ओशो बनना है। आपको स्वयं होना है। दुनिया में कोई भी आपके लिए अनुसरणीय नहीं है। सबकी बात समझना, सुनना, गुनना। क्योंकि उनकी बात हमारे उपयोग की होगी। लेकिन उनकी नकल मत करना।

पश्चिम का एक बहुत बड़ा विचारक हुआ हर्मन हैश। उसकी लिखी हुई बड़ी प्रसिद्ध किताब है– 'सिद्धार्थ' शायद आप लोगों ने पढ़ी होगी। भारत में एक फिल्म भी बनी थी अंग्रेजी में। शशि कपूर ने उसमें सिद्धार्थ का रोल अदा किया था। शायद आपने देखी हो। उसकी कहानी का छोटा–सा हिस्सा आपको कहूँ। उससे समझ में आएगी मेरी बात। 'दो मित्र रहते हैं एक का नाम सिद्धार्थ है, एक उसका दोस्त है। उन दोनों के मन में धर्म की प्यास पैदा होती है। गौतम बुद्ध के जमाने की कहानी है। ढ़ाई हजार साल पुरानी। वे दोनों गौतम बुद्ध के पास जाते हैं। बुद्ध के प्रवचन सुनते हैं। बुद्ध की शिक्षा यही थी– अप द्वीपो भव। अपने दीपक स्वयं बनो। सिद्धार्थ का जो मित्र रहता है, वह बुद्ध का भिक्षु बन जाता है। सिद्धार्थ जाता है गौतम बुद्ध के पास, धन्यवाद देकर उनके चरण स्पर्श करता है और कहता है कि धन्यवाद प्रभु! आपने मुझे रास्ता बताया। अब मैं जाता हूँ आपसे दूर क्योंकि आपने अपने अनुभवों से जो देशना हमें दी, उससे मैं समझ गया कि किसी की भी नकल करने की जरूरत नहीं है। आपने स्वयं अपना मार्ग खोजा। इससे स्पष्ट हो गया कि मुझे भी अपना मार्ग खुद ही खोजना होगा। धन्यवाद देकर सिद्धार्थ वहाँ से विदा हो जाता है। फिर वह संसार में आता। घर–गृहस्थी में जीता। फिर एक दिन एक मांझी से मुलाकात होती है नदी किनारे; वह नाव चलाने का काम करता था। सिद्धार्थ भी वहीं रूक जाता है, उस नाविक की मदद करने लगता है। कुछ खास काम नहीं रहता। दिन में दो चार ग्राहक आते हैं, जिनको नाव में इस पार से उस पार ले जाना होता है। वहीं नदी के किनारे एकांत झोपड़े में वह मांझी रहता है। सिद्धार्थ भी वहीं रहता है। कुछ ज्यादा बात–चीत भी उनकी नहीं होती। खाली समय

है, नदी के किनारे बैठ कर नदी की आवाज सुनता है। नदी का निरीक्षण करता है। कुछ और करने को वहाँ है भी नहीं। कहानी के अंत में बड़ा अद्‌भुत मोड़ आता है। सिद्धार्थ नाविक का काम करते-करते नदी के किनारे फुर्सत में बैठे-बैठे उस एकान्त स्थल पर परम ज्ञान को प्राप्त कर लेता है और उसका मित्र जो बुद्ध का भिक्षु बन गया था, वह कभी ज्ञान को प्राप्त नहीं कर पाता। उसने बुद्ध को अपना आदर्श बना लिया। वह बुद्ध की नकल में पड़ गया। और बुद्ध का जीवन इस बात का प्रमाण है कि उन्होंने स्वयं किसी के द्वारा नहीं पाया। उन्होंने स्वयं अपने विवेक से पाया। जब तक वे दूसरों की नकल करते रहे छः साल तक, तब तक उनको ज्ञान न मिला।

ठीक वही बात मैं आपसे कहना चाहता हूँ। आपने पूछा है कि धर्म के जगत् में सबसे बड़ा भटकने का कारण? सबसे बड़ा कारण है आदर्श। हम सोचते हैं किसी और जैसा हमको होना है। कमल का फूल अगर सोचने लगे कि मुझे गुलाब जैसा होना है, इस कोशिश में वह गुलाब तो नहीं हो पायेगा। लेकिन कमल होने से भी चूक जाएगा। पूरा इतिहास गवाह है। आज तक दो बुद्धपुरूष एक से नहीं हुए। गौतम बुद्ध, महावीर से बिल्कुल भिन्न हैं। महावीर कृष्ण से बिल्कुल अलग हैं। कृष्ण का जीवन और राम का जीवन कोई समानता नहीं है। राम और ईसामसीह उतने ही भिन्न हैं जितना जमीन और आसमान। कहाँ कबीर साहब, कहाँ गुरु नानक देव कोई तालमेल नहीं है। उनकी जीवन शैली बिल्कुल अलग-अलग है। आजतक जितने भी परम ज्ञानी हुए हैं, उनमें कोई भी समानता खोजना मुश्किल है। अर्थात् किसी ने भी किसी की नकल नहीं की। सबने स्वयं होने की कोशिश की। यही उनकी खूबी है। उनसे यही सीखना। इसलिए आपने पूछा है कि धर्म के रास्ते में भटकाने वाला सबसे बड़ा कारण? सबसे बड़ा कारण यही है कि हम अपने मन में किसी आदर्श को स्थापित कर लेते हैं। हम उसकी नकल करने की कोशिश करते हैं और बुरी तरह भटक जाते हैं। हमें पहुँचना था अपने घर, हम पहुँच जाते है कहीं और। अनुयायी हमेशा कहीं और पहुँचता है।

मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन के बारे में, बड़ा शराबी था। एक रात बारह बजे शराब घर से बाहर निकला नशे में धुत, तेज तूफान आया हुआ था, भारी वर्षा हो रही थी, नसरुद्दीन ने देखा उसकी कार की हैडलाइट ऑन नहीं हो रही। कुछ कार में खराबी आ गई। वर्षा से, तूफान से अब बड़ी मुश्किल हो गई। कार में लाइट नहीं जल रही घर कैसे जाएं? उसने सोचा कोई बात नहीं, हैड लाइट नहीं जल रही, किसी दूसरी कार के पीछे उसकी लाइट में चला चलूँ। थोड़ी देर में एक कार वहां से गुजर रही थी। नसरुद्दीन ने अपनी कार उसके पीछे लगा दी। नशे में धुत कार का अनुगमन करते-करते जहाँ कार वाला मुड़े, वहीं नसरुद्दीन मुड़ता जाए। उसी की रोशनी में अपनी कार को आगे बढ़ाता जाए। अन्त में हुआ यह कि सामने वाली कार अचानक रुकी और नसरुद्दीन ने पीछे से आकर उसको टक्कर मारी। वह आदमी सामने की कार वाला उतरा, उसने बहुत गालियाँ दीं और कहा कि तुम पागल हो क्या? देखते नहीं, मैंने कार रोकी; तुमने पीछे से आकर टक्कर मार दी। नसरुद्दीन ने कहा- पागल मैं हूँ कि तुम, तुमको कुछ ड्राइविंग के नियम-कानून कुछ पता हैं कि नहीं। कार रोकने के पहले तुमको इशारा करना था। इन्डिकेट करना था। तब कार रोकनी थी। उस आदमी ने कहा कि हद हो गई। मुझे अपने गैरेज में भी इन्डिकेटर देना पड़ेगा। यह मेरा गैरेज है, मैं अपने घर में हूँ।

बेहोश आदमी सोचता है कि मैं दूसरे की रोशनी में यात्रा कर लूँ। लेकिन याद रखना, दूसरा हो सकता है सही हो, मैं आपसे यह नहीं कह रहा हूँ कि राम गलत हैं, कि कृष्ण गलत हैं, कि बुद्ध गलत हैं। हो सकता है वे सही हों लेकिन वे अपने घर पहुँचे हैं। आप उनके पीछे चलते-चलते उनके गैरेज में पहुँच जाएंगे। आप अपने घर नहीं पहुँच पाएंगे और पहुँचना था अपने घर। धर्म के रास्ते पर सबसे बड़ा भटकाव है- मन में आदर्श। मैं आपसे विनती करता हूँ आप अपने मन में कोई भी आदर्श न रखें। अगर अपने स्वभाव को जानना है तो सारे प्रभावों से मुक्त हो जाएं। ये स्वभाव और प्रभाव दो शब्दों को समझना। प्रभाव का अर्थ है- दूसरों से जो हमने सीखा। और स्वभाव

का अर्थ है- हमारे खुद के भीतर जो है। जिसे हम लेकर ही पैदा हुए हैं। अपने स्वभाव में जाना है। अपने स्वरूप को पहचानना है। तब आत्मज्ञान घटता है। दूसरे के प्रभाव में आकर हम हमेशा भटक जाते हैं और धर्म के रास्ते पर सबसे बड़ी उलझन यही है।

प्रश्न- एक मित्र ने पूछा है कि आस्था चैनल पर, जागरण चैनल पर प्रवचन सुनकर मैंने ध्यान लगाना शुरू कर दिया और आनन्दित रहता हूँ। साधना के पथ पर और आगे बढ़ना चाहता हूँ। किन्तु इससे घर-गृहस्थी पर तो कोई फर्क नहीं पड़ेगा। क्योंकि मुझे अपने पत्नी बच्चों का पालन पोषण करना है। वह भी मेरा धर्म है?

उत्तर : ओशो की शिक्षा, घर-गृहस्थी में रहते हुए, अपने सारे उत्तरदायित्व निभाते हुए ध्यान की साधना करने को कहा है। आप अगर शान्त हो जाएंगे, आनन्दित हो जाएंगे, आप प्रसन्न हो जाएंगे तो आपकी घर-गृहस्थी और सुन्दर तरीके से चल सकेगी। पुराने संन्यास की धारणा छोड़ दो। बुद्ध और महावीर ने और शंकराचार्य ने जो संन्यास सिखाया, वह जीवन के विरोध में था। उसमें घर-गृहस्थी का त्याग करना था। मकान और ऑफिस को छोड़ना था। ओशो हमें जो सिखा रहे हैं वह बिल्कुल भिन्न बात है। ओशो कह रहे हैं- अपने घर परिवार में रहो। तुम दुकानदार हो तो तुम दुकानदार रहो। तुम जो काम करते हो, उस काम को जारी रखो। हाँ, तुम्हारे काम करने का तरीका और सुन्दर और प्रेमपूर्ण और होशपूर्ण बने। अभी तो जो परिवार है नाम मात्र को ही वहाँ प्रेम होता है। काश तुम ध्यानस्थ हो जाओ तुम्हारे भीतर से अद्‌भुत प्रेम का झरना फूटेगा। केवल आनन्दित व्यक्ति ही प्रेमपूर्ण हो सकता है। दु:खी आदमी कैसे प्रेमपूर्ण होगा। दु:खी आदमी दूसरों को भी दु:ख देता है। केवल सुखी व्यक्ति ही अपने आस-पास सुख की तरंगे फैलाता है। तुम्हारा ध्यान में डूबना, तुम्हारा सुखी और शान्त होना तुम्हारे आस-पास के लोगों के लिए बड़ा उपयोगी साबित होगा। तब तुम अपनी पत्नी को, अपने बच्चों को सही प्रेम कर पाओगे। जब तुम गुरु के प्रति श्रद्धा से भर गए। तब केवल गुरु के प्रति ही नहीं, तुम अपने माता-पिता के प्रति

भी बड़े आदर और सम्मान से भर पाओगे। अभी तो तुम सिर्फ कर्त्तव्य, ड्यूटी निभा रहे हो। फिर तुम सचमुच में माता-पिता की सेवा कर पाओगे। फिर वह सेवा तुम्हारे भीतर के प्रेम से उपजेगी। ड्यूटी और कर्त्तव्य नहीं होगी। अभी तुम कह रहे हो बच्चों का पालन करना तो मेरा धर्म है। यहाँ धर्म का अर्थ है- ड्यूटी, कर्त्तव्य, उत्तरदायित्व। फिर ऐसा शब्द तुम इस्तेमाल न करोगे। तुम कहोगे परमात्मा के छोटे-छोटे रूप, बच्चों के रूप में जो मेरे घर आए हैं, मैं परमात्मा की पूजा कर रहा हूँ। फिर तुम्हें मंदिर में जाकर किसी पत्थर की मूर्ति को भोग लगाने की जरूरत नहीं। अपने बच्चों के लिए जो भोजन-पानी का तुम इंतजाम कर रहे हो; परमात्मा की ही सेवा कर रहे हो। तब तुम्हारा व्यवहार बदल जाएगा। तुम्हारा दृष्टिकोण बदलने से सारी बात बड़ी आनन्दपूर्ण हो जाएगी।

आपने पूछा है कि घर-गृहस्थी में कोई फर्क तो नहीं पड़ेगा? फर्क तो पड़ेगा लेकिन वह अच्छा पड़ेगा। आप शायद सोच रहे हैं कि घर-गृहस्थी का त्याग करना पड़ेगा। नहीं, जरा भी नहीं बल्कि घर-गृहस्थी में बड़ा आनन्द आ जाएगा। ना केवल आप सुखी होओगे, आपके कारण परिवार के अन्य लोग भी सुखी और प्रसन्न होने लगेंगे। तो ओशो के शिष्य बनना एक अलग बात है। पुराने संन्यास से इसकी तुलना मत करना। बुद्ध के भिक्षु घर-गृहस्थी छोड़ कर चले गए। भिखारी बन गए। महावीर, शंकराचार्य इन सबने वही शिक्षा दी। जीवन का त्याग करो। इनके त्याग व संन्यासियों में कितने लोगों को आनन्द और परमात्मा मिला; यह तो कहना मुश्किल है। लेकिन इनकी वजह से कितने लोगों को दु:ख मिला, उसका हिसाब लगाओ। पुराने जमाने में संयुक्त परिवार होते थे। एक आदमी कमाने वाला होता था, पच्चीस आदमी खाने वाले होते थे। बड़े-बड़े परिवार पच्चीस-तीस चालीस लोगों के एक-एक परिवार होते थे। एक व्यक्ति का घर छोड़कर चले जाना कम से कम पच्चीस लोगों के दु:ख का कारण था। कहते हैं कि बुद्ध के पचास हजार शिष्य थे। महावीर के पचास हजार शिष्य थे। उनके जीवन काल में ही एक लाख शिष्य थे इन दो लोगों के। इन एक लाख में से कितनों को

ज्ञान मिला। शायद दस-पाँच को मिला हो। कहना मुश्किल है। मगर एक लाख लोगों की वजह से कम से कम पच्चीस लाख लोगों को जीवन में दु:ख मिला। यह तो पक्का है। कोई वृद्ध माता-पिता आशा और उम्मीद लगा कर बैठे होंगे कि मेरा बेटा बुढ़ापे में मेरी लाठी बनेगा। मेरा सहारा बनेगा और वह बेटा छोड़ कर चला गया। उसकी पत्नी रही होगी। जिसको सात फेरे लगाकर, आश्वासन देकर वह लाया था कि जिन्दगी भर तेरा ख्याल रखूँगा और अचानक पतिदेव गायब हो गए। भिक्षु बन गए। अपने पति के जिन्दा रहते-रहते उसकी पत्नी विधवा जैसी हो गई।

जरा पुराने जमाने की याद करो। उस समय विधवा की क्या हालत हुआ करती। हो सकता है इसको कहीं नौकरानी बनना पड़ा हो। कहीं बर्तन माँजने पड़े हों। कहीं झाड़ू लगानी पड़ी हो। तब अपना पेट पाल पाई हो। यह जो भिक्षु बन गया उसके बच्चों का क्या हुआ? उसका हिसाब-किताब किसी शास्त्र में नहीं लिखा। अगर ये एक लाख लोग संन्यासी बनें तो इनके कम से कम पाँच लाख-छ: लाख तो बच्चे रहे होंगे। वे अपने बाप के जिन्दा रहते-रहते अनाथ हो गए। किसी को हो सकता है जेब कतरा बनना पड़ा हो, किसी को बाल मजदूरी करनी पड़ी हो, किसी को भिखारी बनना पड़ा हो। बाप मर जाता तो कम से कम फिर भी एक सन्तोष रहता। पिता जिन्दा है और बच्चों को भीख माँगनी पड़ रही है कि बाल मजदूरी करनी पड़ रही है। कितनी दु:खदायी स्थिति रही होगी।

ओशो इस प्रकार के संन्यास के सख्त खिलाफ हैं। ओशो का कहना है कि यह तो बड़ी हिंसा हो गई। यह महावीर के शिष्य कह रहे हैं 'अहिंसा परमो धर्मों' और इन्होंने अपने ही परिवार के लोगों के साथ कितनी हिंसा की है। और एक लाख की गिनती तो मैं उस समय की बता रहा हूँ बुद्ध और महावीर के जिन्दा रहते। तब से लेकर इन ढ़ाई हजार सालों में कितने करोड़-करोड़ लोग भिक्षु और मुनि बने। इनका अगर हिसाब लगाओ। तो मैं नहीं समझता हिटलर ने और सिकन्दर ने जितनी हिंसा की है, उससे कम हिंसा इन लोगों ने की। हिटलर भी और लेनिन भी और माओ भी फीके पड़ जायेंगे इनके सामने। संन्यास के

नाम पर, धर्म के नाम पर जो होता रहा है, वह जरा भी धार्मिक न था। ओशो ने हमें जो शिक्षा दी है, वह बिल्कुल अलग है। वे कह रहे हैं कि संसार में रहते हुए साधना करना है। उसे उन्होंने एक नया शब्द दिया है– 'जोरबा दी बुद्धा।'

जोरबा एक ग्रीक नाटक का पात्र है। वह मैटिरिलियस्टिक भौतिकवादी व्यक्ति है और बुद्ध प्रतीक हैं अध्यात्मवाद के। जोरबा दी बुद्धा का अर्थ है संसार और संन्यास का समन्वय। धन भी कमाओ और ध्यान में भी डूबो। घर–गृहस्थी में रहो और परमात्मा को खोजो। इन दोनों में कोई विरोध नहीं है। ओशो ने स्वयं ऐसा करके दिखाया। वे हमारे लिए साक्षात प्रमाण हैं और ओशो के दस लाख शिष्य आज दुनिया में हैं जो अपनी घर–गृहस्थी में रह रहे हैं। अपने सारे उत्तरदायित्व का निर्वाह कर रहे हैं और ध्यान साधना कर रहे हैं। ये दस लाख लोग प्रमाण हैं कि ऐसा हो सकता है। परमात्मा को पाने के लिए संसार से भागने की कोई जरूरत नहीं। अगर परमात्मा को पाने के लिए संसार को छोड़ना पड़ता तो परमात्मा ने संसार बनाया क्यों? इन साधु–महात्माओं से कोई पूछे तो सही। ये जो संसार छोड़ कर भाग गए; ये परमात्मा से ज्यादा समझदार हैं? परमात्मा ने संसार बनाया और ये छोड़ कर भाग गए। मुझे याद आता है एक पुराना फिल्मी गीत भगवती चरण वर्मा जी की फिल्म चित्रलेखा का–

संसार से भागे फिरते हो, भगवान को तुम क्या पाओगे?
इस लोक में कुछ पा न सके, उस लोक में भी पछताओगे।
यह भोग भी एक तपस्या है, तुम त्याग के मारे क्या जानो।
होगा अपमान रचियेता का, रचना को अगर ठुकराओगे।
संसार से भागे फिरते हो, भगवान को तुम क्या पाओगे।

वे लोग जो संसार में कुछ पाने में असफल रहे, जो क्षुद्र को भी न पा सके, वे विराट परमात्मा को कैसे पाएंगे। जिनमें इतनी भी बुद्धि न थी, जिनमें इतनी भी प्रतिभा न थी। जिनके भीतर अपने माता–पिता, पत्नी अपने बच्चों के प्रति भी प्रेम न था, वे क्या खाक भक्त होंगे? भक्त होने का अर्थ है विराट जगत से प्रेम। पूरे अस्तित्व से प्रेम।

तुम अपने माता-पिता और बच्चों को प्रेम न कर पाए, अपने भाई-बहन को प्रेम न कर पाए, परमात्मा से क्या खाक प्रेम करोगे? नहीं, इसी संसार में रहना है।

आपने पूछा है कि क्या घर-गृहस्थी में फर्क पड़ेगा? जरूर पड़ेगा लेकिन फर्क बेहतर का पड़ेगा। हमारे मन में जो डर बैठा है वह इसलिए क्योंकि पिछले हजारों-हजारों सालों से धार्मिक लोगों ने संसार को बहुत दु:ख दिया है। विशेषकर स्त्रियों को। स्त्रियों के मन में तो बड़ा डर समा गया। क्योंकि स्त्रियाँ तो पुरुषों पर निर्भर थीं। आज की बात छोड़ दो। आज की पढ़ी-लिखी आधुनिक स्त्री, आज से सौ साल पहले की जरा कल्पना करो। स्त्रियाँ पढ़ी लिखी न थीं, कोई काम न कर सकती थीं। राजनीति में नहीं आ सकती थीं। धन नहीं कमा सकती थीं, दुकान नहीं चला सकती थीं। घर की चार-दीवारी के भीतर बंद, आर्थिक रूप से गुलाम। उनका पति उन्हें छोड़ कर चला जाए। उनके लिए जीते-जी मर जाने जैसा हो गया। इसलिए महिलाओं के मन में, धर्म के खिलाफ, संन्यास के खिलाफ बड़ी दहशत छाई हुई है। स्वाभाविक है ऐसा होगा ही।

हजारों सालों से जिनको सबसे ज्यादा कष्ट भोगना पड़ा है; वे हैं स्त्रियाँ। पुरुष तो संन्यासी हो गए, स्वामी बन गए; लोग उनके पैर छू रहे हैं, पैरों में फूल मालाएं डाल रहे हैं। उनको तो सम्मान मिल रहा है। उनकी माँ का क्या हुआ? उनकी पत्नी का क्या हुआ? उनकी बहन का क्या हुआ? किसी ने हिसाब नहीं लगाया। इस आदमी की बेटी पर क्या गुजरी? हो सकता है उसे वैश्या बन जाना पड़ा हो, भोजन-पानी के इंतजाम के लिए। इसका हिसाब किसी ने नहीं लगाया। ओशो इस प्रकार के त्यागवाद के विरोध में हैं। उनका कहना है संसार में, घर-गृहस्थी में रह कर ही ध्यान साधना करो।

दसवां प्रवचन

जागरण और श्रवण

मुख्य बिन्दु :

- आपका मूल कार्य क्या है?
- ओशो की जीवन्त धारा का तात्पर्य
- पात्रता का मतलब ही होता है- खालीपन।
- विश्व की भयावह स्थिति
- ध्यान समाधि से लेकर परमहंस समाधि तक का विज्ञान

प्रश्न - 1 : आपका मूल कार्य क्या है?

उत्तर : कार्य न कहो तो ज्यादा अच्छा। कार्य बड़ा गम्भीर शब्द है। यह तो एक लीला है, एक खेल है। एक अद्‌भुत आनन्द मिला है हम उसे बाँट रहे हैं। इसे काम न कहो । काम बहुत गम्भीर शब्द हो जाता है, बस एक खेल है। कुछ मिला है, कुछ देखा है, वह बताना चाहते हैं। कुछ सुना है, उसे सुनाना चाहते हैं। 'यह जीवन ही प्रभु है', यह जाना है, यही जनाना चाहते हैं। पूछते हो मूल कार्य क्या है? वही जो सदा से सन्तों का रहा है, एक ही तो कार्य है जीवन में, छुपे परमात्मा की खोज, उसकी तरफ लोगों को अग्रसर करना; प्रभु के लिए प्यासे

करना और जो प्यासे हैं, जिनकी प्यास जाग गई है उन्हें सरोवर का रास्ता बताना। लेकिन इसे कार्य न ही कहो तो ज्यादा अच्छा है।

कार्य की भाषा में कहो तो मैं कहना चाहूँगा कि इसके तीन खण्ड हम कह सकते हैं, पहला खण्ड है लोगों को जगाना। लोग बहुत गहरी नींद में हैं और बहुत दु:खद स्वप्नों में खोए हुए हैं। उन्हें झकझोरना होगा, जगाना होगा। जो जाग गए, जिन्होंने आँखें खोल लीं उनके साथ फिर दूसरा कार्य शुरू होता है, जीवन के परम संगीत को सुनाना। यह जीवन एक अद्‌भुत संगीत से ओत-प्रोत है, लेकिन उस संगीत को वही जान पाते हैं, जो जाग गए नींद से, जिनकी बेहोशी टूटी। तीसरा चरण है जिन्होंने संगीत को जाना-पहचाना; अब उनको संगीत में इतनी गहराई तक डुबाना कि डूबते-डूबते डूबने वाला न बचे।

'हेरत-हेरत हे सखी रहा कबीर हिराई।
बुंद समानी समुंद में सो कत हेरि जाई।'

ओशो ने जिसके लिए यह शब्द 'ओशो' सम्बोधन चुना, उसका ठीक यही अर्थ है जो कबीर ने कहा- बूंद सागर में गिर गई। ओशो शब्द बना है 'ओशनिक एक्सपीरिएंस' से, सागरीय अनुभव से। बूंद सागर में मिल गई और सागर ही हो गई। अब अलग से बूंद की कोई सत्ता न रही। विराट, निराकार और अरूप हो गई, वही अर्थ है ओशो का है।

आप पूछते हैं कि मूल कार्य क्या है? तीन चरणों में समझ लें; पहला चरण- जगाना, दूसरा- जीवन के परम संगीत को सुनाना और तीसरा- उसमें ऐसा डुबाना कि डूबने वाला शेष न बचे।

रामकृष्ण कहा करते थे कि एक नमक का पुतला सागर की थाह लेने के लिए सागर में उतरा, जैसे-जैसे भीतर डूबता गया- गहराइयों में पहुँचता गया, वैसे-वैसे घुलने लगा- पिघलने लगा। और अन्तत: नमक का पुतला बचा ही नहीं। वह सागर स्वरूप ही हो गया। सागर की गहराई तो उसने जानी, लेकिन सागर होकर ही जानी। भीतर कुछ वैसा ही अद्‌भुत अनुभव घटित हुआ है। उसे बाँटना है, मित्रों तक खबर पहुँचानी है। अब इसे कार्य कहना चाहो तो कार्य कह लो। पर कार्य है नहीं। बस अपने आनन्द का फैलना है। आनन्द का

स्वभाव है फैलना, बंटना। जैसे कोई फूल खिला और उसकी सुगन्ध बिखरती है। अब कोई पूछे फूल से कि आपका मूल कार्य क्या है? क्या आप सुगन्ध को फैलाना चाहते हैं? तो फूल कहेगा कि नहीं, ऐसा कभी मैंने सोचा तो नहीं। लेकिन यह एक सहज घटना है। फूल खिलता है तो सुगन्ध उड़ती है। फूल खिलता है तो सुवास फैलती है। बस यह एक स्वाभाविक सहज घटना है। वैसा ही कुछ यहाँ हो रहा है। दूर-दूर से मित्र आ रहे हैं, जागरण का रसास्वादन कर रहे हैं। जीवन के परम संगीत को सुनने में सक्षम हो रहे हैं और उसमें डूबते-डूबते अंततः विलीन हो रहे हैं। कार्य नहीं; लीला कहो तो ज्यादा अच्छा। बस यही कहना चाहता हूँ कि–

बहुत कुछ और भी है इस जहाँ में ए दोस्त,
यह जिन्दगी महज गम ही गम नहीं है।
तुम मानो या न मानो मगर मैं तो कहे जाऊँगा,
जो सुन रखा था हमने वो आलम नहीं है।
निगाहों से अपनी ख्यालों का धुआँ सरकाओ,
जीस्त की रोशनी शीतल है तम नहीं है।
बन्द पलकों में सजे सपने बड़े दर्दीले हैं पर,
आँख खोलो तो खुशियों का खजाना भी कम नहीं है।
इन जाहिलों के जाल से जो बच सका वो शख्स,
पाता यहीं है मंजिल, चलता कदम नहीं है।
क्या ढूँढते जमाने में बदहवास फिर रहे हो,
रुक जाओ और यहीं, कोई तो गम नहीं है।
जो सुन रखा था हमने, वो आलम नहीं है
बहुत कुछ और भी है इस जहाँ में ए दोस्त,
यह जिन्दगी महज गम ही गम नहीं है।

जिन्दगी परम आनन्द है लेकिन उसके लिए खोज-बीन करनी होगी, थोड़ा तलाशना होगा।

निगाहों से अपनी ख्यालों का धुआँ सरकाओ,
जीस्त की रोशनी शीतल है, तम नहीं है।

यह रोशनी ऐसी है जो जलाती नहीं है, शीतल है, ठंडक

पहुँचाती है। लेकिन इस शीतल रोशनी को खोजने के लिए थोड़ा-सा जागना होगा। सोये-सोये वह रोशनी नहीं दिखाई देगी। मूर्च्छित आँखों से देखोगे तो अंधेरा जान पड़ेगा, लेकिन अंधेरा है नहीं। थोड़ा रुको, थोड़ा ठहरो, थोड़ा ख्यालों का धुआँ आँखों से सरकाओ, तो शीतल रोशनी के दर्शन हो सकते हैं। बस वही एक कोशिश चल रही है। चल रही है ऐसा कहना भी गलत है, ऐसा अपने आप अस्तित्वगत रूप से हो रहा है, कोई कर नहीं रहा है। जो रोशनी देखी है, वही चाहता हूँ कि और सब देख लें। क्योंकि बहुत लोग प्यासे हैं, बहुत लोग अंधेरे में हैं और टटोल रहे हैं। उन तक खबर पहुँच जाए, इस दिशा में प्रयास चल रहा है- हो रहा है अपने आप, करने वाला कोई भी नहीं। जगाना है, सुनाना है और उस परम संगीत के संग एकात्म कराना है।

प्रश्न - 2 : ओशो की जीवन्त धारा से क्या तात्पर्य है?

उत्तर : कोई भी बुद्ध पुरुष जब होते हैं और उनके विदा होने के बाद प्रायः ऐसा होता है कि उनके शब्दों को पकड़कर बहुत लोग बैठ जाते हैं। यही जिन्दगी का नियम है, आज तक ऐसा ही होता आया है। शायद भविष्य में भी ऐसा ही हो, कोई बहुत बड़े परिवर्तन की आशा और उम्मीद भी नहीं की जा सकती। शब्दों को पकड़ के, किताबों को पकड़ के लोग बैठ जाते हैं, और जो मूल बात थी, वह खो जाती है। कालान्तर में सिद्धान्त रह जाते हैं, शास्त्र रह जाते हैं, शब्द रह जाते हैं और शब्दों के भीतर जो मौन का संगीत पिरोया था, वह चूक जाता है, वह खो जाता है। जीवन्त धारा का अर्थ है- जहाँ शब्दों पर, सिद्धान्तों पर किताबों पर कार्य नहीं हो रहा है, बल्कि उस बुद्ध पुरुष के द्वारा कही गई बातों का जो मूल तत्व है उसकी साधना हो रही है। कोई चर्चा और वाद-विवाद नहीं हो रहे हैं, कोई शब्दों की बाल की खाल नहीं उधेड़ी जा रही है, बल्कि उन शब्दों की आत्मा को खोजा जा रहा है। उन शब्दों में मौन छुपा हुआ है उस मौन को उघाड़ा जा रहा है।

ओशो की किताबों में शब्दों के बीच में जो खाली जगह है, उस जगह को पढ़ा जा रहा है और वही असली बात है। लेकिन ऐसा

सदा-सदा से होता आया है, जब भी कोई जागृत पुरुष कुछ कहते हैं, कालान्तर में सिर्फ उनके शब्द हाथ में रह जाते हैं और मूल बात खो जाती है और मजे की बात यह है कि इन शब्दों का इस्तेमाल सिर्फ इसलिए किया गया था ताकि वह मौन संदेश तुम्हारे हृदय तक पहुँचाया जा सके। कुछ अद्‌भुत और अपूर्व उनके भीतर जो हुआ था, मौन में, निशब्द में, निर्विचार में, उसे ही बताने के लिए शब्द का और विचारों का उपयोग किया था। ऊपर-ऊपर की खोल पहुँच जाती है, भीतर की असली बात छूट जाती है।

ओशो ने एक प्रवचन में एक बड़ी ही प्यारी कहानी कही है। कहानी नहीं एक सत्य घटना है। यूरोप के किसी देश में विषों का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों की एक प्रयोगशाला थी। जहाँ पर विषों के ऊपर, पॉइजन्स के ऊपर काम चलता था। वहाँ सारा शोध कार्य जहरीले पदार्थों पर था। उस प्रयोगशाला में कुछ चूहे पैदा हो गए और धीरे-धीरे उनकी संख्या बढ़ने लगी। तो वहाँ के कर्मचारियों ने चूहों को मारने के लिए कुछ पॉइजन्स छिड़के, कुछ जहरीले पदार्थों का छिड़काव किया। लेकिन मजे की बात उन जहरीले पदार्थों को छिड़कने से चूहे मरे नहीं, क्योंकि वे चूहे जो उस प्रयोगशाला में पैदा हुए थे वे बचपन से ही जहर खाने के आदी थे। जहर ही उनका भोजन था। प्रयोगशाला में और दूसरे पदार्थ तो वहाँ थे नहीं, वे जो विषैले पदार्थ थे, वे ही उनका आहार था। तो जहर जब छिड़का गया तो वे और तन्दुरुस्त हो गए, उनको भोजन मिल गया। वे उसी के आदी हो गये थे। तो बड़ी मुश्किल हुई कि क्या किया जाय। विषैले से विषैले पदार्थ उन पर कोई प्रभाव न डाल सके। तब सोचा गया कि इनको पिंजड़ों में, चूहे पकड़ने के जो पिंजड़े आते हैं, उनमें पकड़ के यहाँ से बाहर फेंका जाय। जैसा कि परम्परा थी कि चूहे के पिंजड़े के अन्दर ब्रैड लटका दी जाती है, चूहा उससे आकर्षित होकर पिंजड़े के अन्दर जाता है और फंस जाता है। पिंजड़े उपयोग किये गए लेकिन असफल रहे। क्योंकि चूहे ब्रैड को अपना भोजन समझते ही नहीं थे। उन्हें पता ही नहीं था कि ब्रैड भी कोई खाने की चीज है। उन्होंने जिन्दगी में कभी ब्रैड खाई ही नहीं थी। वे कोई भी पिंजड़े के पास नहीं आए। तब फिर एक उपाय करना पड़ा, एक बड़ी सूझ-बूझ वाले वैज्ञानिक ने सुझाया कि इस ब्रैड के ऊपर जहर

की पर्त लपेटो। वैसा ही किया गया। ब्रैड के ऊपर जहर की मोटी पर्त चढ़ाई गई और उसे पिंजड़े के अन्दर लटकाया गया। तब चूहे आए, ब्रैड को खाने के लिए नहीं, जहर को खाने के लिए, अपने भोजन की तलाश में और पिंजड़े के अन्दर वे फँस गए और तब उन्हें वहाँ से ले जाकर बाहर कहीं दूर फेंका गया।

यह कहानी सुनाकर ओशो कहते हैं कि बुद्ध पुरुषों का कार्य भी करीब-करीब ऐसा ही है। जो उन्हें देना है वह तो उनके भीतर का मौन संगीत है, जो उन्होंने निर्विचार में जाना। लेकिन उसे संप्रेषित कैसे करें? वह अगर मौन ही बैठ जायें तो कोई भी उनकी बात नहीं समझ पायेगा। लोग शब्दों के, सिद्धान्तों के, विचारों के आदी हैं। जहर को ही अपना भोजन मानते हैं। उन्हें ब्रैड भी खिलानी हो तो जहर में लपेट के ही देनी पड़ेगी, और कोई उपाय नहीं है। उन्हें मौन भी सिखाना हो तो उसे भी शब्दों में लपेट कर, विचारों में बाँध कर देना पड़ेगा। शून्य भी उन्हें देना हो तो सिद्धान्तों में बाँध कर इस उम्मीद के साथ कि शायद कोई तो समझ जायेगा। कोई तो उसे खोलेगा और भीतर की बात को पहचानेगा, जो असली बात थी।

गौतम बुद्ध ने महाकाश्यप को जो दिया था, वही गौतम बुद्ध सबको देना चाहते थे, लेकिन किन्हीं विरले लोगों को ही दे पाते हैं। हर बुद्ध पुरुष अपना मौन हमें देना चाहता है, लेकिन हम लेने को तैयार नहीं। हम तो केवल भाषा के आदी हैं, शब्दों के आदी हैं। उन्हें अपने मौन को भी प्रदूषित करके शब्दों में लपेट के देना पड़ता है। ये उनकी मजबूरी है, और कोई उपाय नहीं है।

कालान्तर में दो प्रकार की धाराएँ हर बुद्ध पुरुष के पीछे चलती हैं। पहली जो ऊपर के शब्दों को, विचारों को, सिद्धान्तों को, फिलॉसफी को, दर्शन शास्त्र को पकड़कर बैठ जायेंगे; उन्हें हम कह सकते हैं- मतवादी। और दूसरी जो, भीतर के असली तत्व को उखाड़ लेंगे, उन्हें हम कह सकते हैं- तत्ववादी। तो प्रत्येक बुद्ध पुरुष के पीछे दो प्रकार की धाराएँ चलती हैं। हजरत मोहम्मद के पीछे एक मुसलमानों का सम्प्रदाय चल रहा है और दूसरी सूफियों की तात्विक धारा चल रही है। सभी बुद्ध पुरुषों के साथ यह घटना

घटती है। ऐसा ही शायद भविष्य में भी होता रहेगा। क्योंकि लोग अपनी गलतियों से सीखते कहाँ हैं। यहाँ जो कार्य चल रहा है, वह ओशो की जीवन्त धारा अथवा तात्विक धारा, है। ओशो की जो मूल देशना है, जो समाधि के सूत्र उन्होंने दिये हैं, संबोधि तक पहुँचने का जो मार्ग उजागर किया है, उसकी साधना की जा रही है। कोई चिन्तन-मनन नहीं, कोई शब्दों की ऊहा-पोह नहीं। विचारों की, मतों की, सिद्धान्तों की, फिलॉसफिज की चर्चा में हम नहीं उलझे हैं। सीधी-सीधी मूल बात संप्रेषित की जा रही है। लेकिन मनुष्य का दुर्भाग्य बहुत कम लोग तात्विक धारा से परिचित हो पाते हैं या बहुत कम लोगों के जीवन में प्यास उत्पन्न हो पाती है कि वे तात्विक धारा तक पहुँच पायें। साधकों का बड़ा वर्ग केवल शब्दों में उलझकर रह जाता है। अब समय आ गया है कि लोगों को इस सम्बन्ध में चेताया जाए, बताया जाए कि केवल शब्दों में मत उलझ जाना। केवल प्रवचन सुनके संतुष्ट मत हो जाना। केवल ध्यान की विधि करके प्रसन्न मत हो जाना कि हो गया काम। बहुत दूर जाना है, ध्यान की विधि शुरुआत है। ओशो के प्रवचन किसी ने सुने, यही शुरुआत है। लेकिन शुरुआत को ही समापन मत समझ लेना। बस इतनी-सी बात है और यह बात दूर-दूर तक फैलानी होगी। क्योंकि बहुत लोग ओशो को एक दार्शनिक के रूप में, एक लेखक के रूप में, एक विचारक, एक चिंतक के रूप में स्थापित करने की कोशिश कर रहे हैं। वह कोशिश तोड़ी जानी चाहिए। ओशो की मूल बात उनका दर्शन नहीं, उनका चिन्तन नहीं, जीवन की परिधि पर विभिन्न आयामों के सम्बन्ध में कहे गए उनके क्रान्तिकारी विचार नहीं, बल्कि उनकी मूल देशना अध्यात्म की शिक्षा है। उस शिक्षा को छोड़कर बाकी शेष बातों पर जिसने ध्यान दिया वह ओशो की मूल बातों से चूक जायेगा। तो जब हम कहते हैं ओशो की जीवन्त धारा तो हमारा अर्थ है ओशो की मूल देशना।

ओशो की तात्विक धारा, यानि उनका मूल संदेश जो समाधि की ओर, बुद्धत्व की ओर तथा बुद्धत्व के पार ले जाने में मदद कर सकता है, उसकी साधना। वही कार्य यहाँ पर हो रहा है। एक गीत

मैंने लिखा है, उन लोगों के लिए जो उलझ गए हैं शब्दों में, विधियों में, कर्मकाण्डों में। सुनो-

हे चक्षुहीन दार्शनिको, ज्ञानियो, केवल एक उपकार और करो,
कि उपदेशों से बोझिल जग पर आगे और उपकार मत करो।
धर्म चर्चाएँ बस कोलाहल है, अहंकार के मादक छल हैं,
सन्नाटे का स्वर सुनने दो, शब्दों का संहार मत करो।
वादों से प्रतिवाद जन्मते, मतभेदों से विवाद पनपते,
सत्य सिद्धि की साधना सीखो, सिद्धान्तों का व्यापार मत करो।
काम-क्रोध-मद-लोभ-ईर्ष्या, लड़कर कोई न इनसे जीता,
मूल बीमारी की दवा खोजो, लक्षणों का उपचार मत करो।
मान्यताओं और धारणाओं से, पीड़ित है धरती पहले से,
निर्विचार मौन में डूबो, शास्त्रों पर पुनर्विचार मत करो।
विश्वासों व श्रद्धाओं की, भीड़ लगी इन विपदाओं की,
शून्य हृदय को रह जाने दो, शिक्षा व संस्कार मत भरो।
बहुत हुईं आनन्द की बातें, किन्तु दुःख में बीतीं दिन-रातें,
वर्तमान क्षण का सुख भोगो, गत-आगत का ध्यान न धरो।
सुलझाने की कोशिश जितनी, बुद्धि उलझती ही गई उतनी,
निर्मल कुंवारी चेतना के संग, तर्कों से बलात्कार मत करो।
पाप-पुण्य, शुभ-अशुभ, नीति की खोखली बकवास मत करो,
प्रेम की प्यासी दुनिया का, दया दिखा उपहास मत करो।
जो कभी आपके काम न आया, उस ज्ञान का उपहार मत दो,
हो सके तो प्यार दो, प्यार लो, तर्कों की बौछार मत करो।
पूजा-प्रार्थना-व्रत अनुशासन, छोड़ो नियम-संयम-योगासन,
सजग-सरल-सहज-शिशुवत बनो, पाखण्डी व्यवहार मत करो।
हे चक्षुहीन दार्शनिको- ज्ञानियो, केवल एक उपकार और करो,
उपदेशों से बोझिल जग पर, आगे और उपकार मत करो।

जिनकी खुद आँखें नहीं हैं, वे अगर दूसरों को रास्ता दिखायेंगे तो वही होगा जिसकी तरफ कबीर ने इशारा किया है-

अन्धा-अन्धा ठेलिया, दोनों कूप पड़ंत।

ओशो की जीवन्त धारा से तात्पर्य है- आँख खोलकर जीना सीखो, वह जानो जो स्वयं ओशो ने जाना। उस मूल तत्व को, परमात्मा को पहचानो, जिसे ओशो ने पहचाना। उसमें डूबो और ऐसे डूबो कि वही हो जाओ। ओशो ने अपनी एक किताब का नाम रखा है- 'साहिब मिल साहिब भये।' परमात्मा से जो मिल जाता है, जो उसमें डूब जाता है, वह परमात्मा ही हो जाता है। इस दिशा में जो काम होगा, वह ओशो की तात्विक धारा कहलायेगी। फिलहाल यह काम ओशो आचार्य संघ द्वारा हो रहा है। हम आशा और उम्मीद करते हैं कि ओशो के सभी प्रेमी, ओशो के सभी साधक, ओशो के सभी चाहने वाले शिष्य, ओशो की तत्व-धारा से जुड़ें, स्वयं खोजें, ढूँढ़ें, परमात्मा से कम पर संतुष्ट न हों। उससे कम पर जो रुक गया, वह मंजिल से पहले किसी मुकाम पर ठहर गया।

प्रश्न - 3 **: आप किस तरह के लोगों पर काम करना चाहते हैं?**

उत्तर : जो लोग सीखने को तैयार हैं। बस एक ही शर्त है जो व्यक्ति भी सीखने के लिए राजी है, हम उसके साथ मेहनत करने के लिए तैयार हैं। क्योंकि हमारी तरफ से यह मेहनत नहीं, हमारा आनन्द है। हमारा अहोभाव है। परम प्यारे सद्‌गुरु ओशो से हमें जो मिला वह हम सभी प्यासों तक पहुँचाना चाहते हैं। अतः जो प्यासे हैं, जो तड़प रहे हैं, जो खोज में हैं, उनका स्वागत है। हाँ, उन लोगों से हम बचना चाहते हैं, जो ज्ञान से ठसाठस भरे हैं, विचारों से लबालब हैं। जो समझते हैं कि उन्होंने कुछ पा लिया है। उनसे हम विनम्र विनती करते हैं कि हमारे पास न आयें। जब आपने पा ही लिया है तो आनन्द करें। फिर और कष्ट करने की जरूरत नहीं है। कभी-कभार में कुछ ज्ञानी लोग यहाँ भी आ जाते हैं। बड़ी मुश्किल खड़ी हो जाती है। पहले से ही उनकी खोपड़ी भरी हुई है विचारों से और उन्हें भ्रम पैदा हो गया है कि वे जानते हैं। अब उन्हें कुछ और नहीं बताया जा सकता। वे कुछ भी सीखने को तैयार नहीं हैं, उल्टा सिखाने के लिए आते हैं। उन लोगों में हमारा कोई रस नहीं है। जो सीखने के लिए राजी हैं, जो झुकने को राजी हैं, जो अपना

पात्र फैलाने के लिए तैयार हैं, उनका स्वागत है। वह परम सम्पदा, उनके पात्र में उड़ेली जा सकेगी। लेकिन खाली जगह तो चाहिए। अगर पात्र पहले से ही भरा है, तो आखिर पात्र है ही नहीं।

पात्रता का मतलब ही होता है- खालीपन। जो रिक्त है, खाली है उसमें कुछ भरा जा सकता है। जो विचारों से भरे हैं, उनके ऊपर मौन की बरसात होती रहेगी और वे खाली के खाली रह जायेंगे। बादल बरसते हैं न, लेकिन पहाड़ खाली रह जाते हैं, तालाब भर जाते हैं। क्योंकि तालाब में पात्रता है, वह पहले से खाली है, इसलिए भर जाता है। और पहाड़ पहले से ही भरे हुए हैं, इसलिए वर्षा के जल से रिक्त रह जाते हैं। आप पूछते हैं कि किस प्रकार के लोगों पर आप काम करना चाहते हैं। उन लोगों पर जो सीखने के लिए राजी हैं। बस हमारी तरफ से एक ही शर्त है, कोई और शर्त नहीं। जो सीखने को राजी हैं, जो अपनी धारणाएँ, अपने अंध विश्वास, अपनी मतान्धता, कट्टरवादिता, अपनी फिलॉसफी की असफलता देख चुका है, और जो प्यासा है पानी के लिए। जो 'एच टू ओ' के फार्मूला को जानना नहीं चाहता और जो पानी की चर्चा नहीं करना चाहता, जो पानी ही पीना चाहता है, जो बहुत चर्चाएँ कर चुका, जो बहुत विचार, चिन्तन-मनन कर चुका और जो जानता है कि पानी के सम्बन्ध में कितने ही शास्त्र पढ़ो, प्यास नहीं बुझती, उसका स्वागत है। उसके साथ काम करने में, अपना आनन्द बाँटने में हमारा आनन्द और बढ़ता है। कभी-कभी कोई ज्ञानी जन आ जाते हैं। एक-दो दिन में पता चल जाता है। उनसे हम क्षमा मांग लेते हैं और बीच में ही विदा कर देते हैं कि आपका यहाँ कोई काम नहीं, आप कहीं और जायें। आप तो स्वयं ही ज्ञान से भरे हैं, कृपया आप अपना ज्ञान कहीं अन्यत्र बाँटें। यहाँ किसलिए आए हैं? यहाँ आपका कोई काम नहीं।

प्रश्न - 4 **: विश्व की भयावह स्थिति में सुधार के लिए क्या कुछ किया जा सकता है?**

उत्तर : निश्चित ही किया जा सकता है। वही काम जो हम यहाँ

कर रहे हैं, ज्यादा से ज्यादा लोग ध्यान में डूबें, समाधि में डूबें, परमात्मा में डूबें, जागें, गहन जागरण को घटित होने दें, अहंकार को विदा होने दें। यह जो विश्व की भयावह स्थिति निर्मित हुई है, यह अहंकार के कारण हुई है। इसकी मूल बीमारी है अहंकार। कुछ दिनों पहले एक मित्र ने मुझसे पूछा था कि आतंकवाद के खिलाफ क्या किया जा सकता है? मैंने कहा कि सबसे पहले तो आतंकवादी को पहचानो, आतंकवादी कौन है? अहंकार आतंकवादी है। उसके बहुत रूप हैं, बहुत रंग-ढंग हैं। लेकिन मूल बीमारी हमेशा जानना, अहंकार है। वह आतंकवादी है और विश्व की जो यह भयावह स्थिति देखते हो वह अहंकारियों की वजह से है। अगर इसको मिटाना है तो किसी आतंकवादी को मारने से, जेल में डालने से बात नहीं बनेगी। मूल बीमारी को ही नष्ट करना होगा, उस अहंकार के खिलाफ लड़ाई लड़नी होगी और वह लड़ाई केवल एक तरीके से लड़ी जा सकती है, हम अपने भीतर उस आतंकवादी अहंकार को विसर्जित कर दें। यह कार्य केवल स्वयं के साथ किया जा सकता है, दूसरों के साथ नहीं। अगर दूसरों के साथ करने चले तो तुम फिर अहंकार की चपेट में आ गए। तुम्हारा वह कृत्य भी अहंकार से ही उपजेगा और उससे कोई समाधान नहीं होने वाला। समाधान तो समाधि में मिलेगा।

डूबो समाधि में और फैलाओ समाधि की हवा। प्रत्यक्ष देखने में साफ-साफ समझ में नहीं आयेगा कि समाधि का और विश्व की भयावह स्थिति का क्या सम्बन्ध हो सकता है। इससे कैसे समस्या हल होगी? लेकिन मैं कहता हूँ तुमसे कि सिर्फ इससे ही समस्या हल हो सकती है। अगर बहुत लोग ध्यान में, समाधि में डूब जायें; बहुत लोग परमात्मा के रस में मगन हो जायें, नाचने लगें, झूमने लगें मस्ती में। 'पीबत राम रस, लगी खुमारी' मस्त हो जायें, तो एक दूसरे प्रकार की आब-हवा सारी पृथ्वी पर फैलाई जा सकती है। बहुत आसानी से यह सम्भव है। आतंकवाद के खिलाफ सीधी लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती, परोक्ष लड़ाई ही होगी। सीधी लड़ाई

जो भी लड़ने जायेगा, वह स्वयं ही अहंकार के वशीभूत होकर जायेगा और उसके द्वारा किया गया प्रत्येक कृत्य विश्व की स्थिति को और भयावह कर देगा। आप पूछते हैं कि विश्व की भयावह स्थिति में सुधार के लिए क्या कुछ किया जा सकता है? आत्म क्रान्ति से गुजरा जा सकता है। अगर तुम समाज को सुधारने गए, विश्व को सुधारने गए तो बात और बिगड़ जायेगी। वह दिशा ही गलत है। तुम सोचो आत्म-क्रान्ति की, आत्म-रूपान्तरण की। तुम्हारे भीतर से कैसे अहंकार पूरी तरह से मिट जाये। कम से कम विश्व के छः अरब लोगों में से तुम एक व्यक्ति हो, तुम्हारे भीतर से अहंकार मिटा। चलो मानवता का एक हिस्सा तो अहंकार से मुक्त हुआ। शुरूआत हो गई, धीरे-धीरे तरंगें और आस-पास फैलने लगेंगी। संक्रमण होने लगेगा। केवल बीमारी ही संक्रामक नहीं होती, स्वास्थ्य भी संक्रामक होता है। समाधि भी, बुद्धत्व भी संक्रामक होता है। तुम डूबो परमात्मा में; तुम अपने जीवन की समस्याओं का समाधान खोज लो समाधि में, फिर तुमसे बहुत शांति की तरंग पैदा होनी शुरू हो जायेंगी और फिर आशा की जा सकती है कि शायद विश्व की स्थिति में कुछ परिवर्तन आए। लेकिन वह परिवर्तन सीधे-सीधे नहीं लाया जा सकता। हजारों-हजारों साल से तो कोशिश चल रही है जगत को रूपान्तरित करने की। कहाँ सफल हो पाई?

प्रथम विश्व युद्ध हुआ सारी दुनिया में बातचीत होने लगी एवं चिन्तन-मनन होने लगा कि कैसे शान्ति स्थापित हो। अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ बन गई, विश्व में शान्ति लाने के लिए और 15-20 साल भी नहीं गुजर पाए कि दूसरा विश्व युद्ध शुरू हो गया। फिर जोरदार कोशिशें शुरू हो गईं। विश्व शान्ति का अभियान सब तरफ से चल पड़ा। लेकिन स्थिति दिन-प्रतिदिन बिगड़ती ही चली गई। यह विश्व सदा से ही ऐसी स्थिति में रहा है। हमें ऐसा लगता है कि आज कुछ बात बिगड़ गई है। नहीं, ऐसी बात नहीं है। यह विश्व सदा से ही इस संकट की स्थिति में रहा है। बीच-बीच में कुछ अन्तराल आते हैं, अन्तराल सिर्फ लड़ाई की तैयारी के काल होते हैं। शान्ति का

काल मनुष्य जाति ने कभी जाना ही नहीं। या तो अशान्ति का काल या फिर अशान्ति कि तैयारी का काल। या तो हम युद्ध करते हैं या युद्ध की तैयारी करते हैं। युद्ध में बहुत जन-धन की हानि हो जाती है। बहुत नुकसान हो जाता है। दूसरा युद्ध करने के लिए थोड़ा समय चाहिए। फिर थोड़ी जन-संख्या बढ़ जाये, फिर थोड़े साधन, फिर थोड़े अस्त्र-शस्त्र इकट्ठे कर लें, थोड़ा समय तो लगेगा। तो सच पूछो तो शान्ति काल जैसी कोई चीज मनुष्य जाति ने कभी जानी ही नहीं। या तो अशान्ति, युद्ध का काल, या फिर युद्ध की तैयारी का काल, दो ही तरह के समय हमने जाने हैं।

शान्ति अभी तक केवल व्यक्तिगत रूप से कुछ लोगों ने जानी है, किसी बुद्ध ने, किसी महावीर ने, किसी पतंजलि ने, किसी गोरखनाथ ने, किसी मीरा ने, किसी नानक ने। कुछ लोग शान्त हुए हैं। समाज शान्त हो पाए, ऐसी स्थिति तो समाज में कभी नहीं बन सकी। लेकिन भविष्य में बन सकती है। आशा की एक पतली-सी किरण दिखाई देती है। ओशो ने जो विराट कार्य किया है, ध्यान के आन्दोलन को विश्वव्यापी बनाया है, सिर्फ इससे एक आशा कि किरण नजर आती है कि शायद ओशो के लोग, ओशो को प्रेम करने वाले ध्यान की गहराइयों में डूबते-डूबते समाधि तक पहुँच जायें। समाधि की गहराइयों में डूबते-डूबते परमात्मा में खो जायें। उनका अहंकार पूरी तरह समाप्त हो जाये। बूंद मिट जाये और सागर ही हो जाये। शान्ति का एक सागर महाशून्य घट जाये।

ओशो ने कहा है कि अगर 200 से ज्यादा लोग इस धरती पर बुद्धत्व को उपलब्ध हो जायें तो विश्व की स्थिति बदल सकती है। तो अतीत में तो ऐसा कभी नहीं हुआ, लेकिन भविष्य में एक आशा की किरण है। ओशो के संन्यासियों पर एक बहुत बड़ी जिम्मेवारी है क्योंकि केवल उन्हीं से उम्मीद की जा सकती है। और शेष लोग तो इतनी गहरी नींद में सोए हैं कि उनके कान पर तो जूँ भी नहीं रेंगेगी। उन तक तो कोई बात पहुँचाई नहीं जा सकती। सिर्फ ओशो के शिष्यों से उम्मीद है, वे ही थोड़े से जागे हुए हैं। और जो व्यक्ति जागा हुआ

होता है, उसी के कधों पर जिम्मेवारी होती है। जो लोग सोए हैं, नींद में कुछ कर रहे हैं, बेहोशी में मूर्च्छित व्यवहार कर रहे हैं उनकी तो क्या जिम्मेवारी कहें। वे तो एक नशे में हैं। अहंकार का नशा चढ़ा हुआ है। वे क्या कर रहे हैं, उन्हें खुद नहीं पता।

पूरा जगत एक जागतिक आत्मघात की दिशा में आगे बढ़ रहा है, एक ग्लोबल सोसाइड। कुछ थोड़े से जागे हुए लोग जो ओशो से जुड़े और जिन्होंने जागरण की साधना शुरू की है, केवल उन्हीं से थोड़ी-सी उम्मीद है। और मुझे लगता है कि ओशो जो कार्य करके गए हैं, जो बीज बोकर गए हैं, अब समय आ गया है, वे बीज अंकुरित हो चुके हैं। कुछ पौधे के रूप में आ गए हैं। कुछ में कलियाँ खिल गई हैं। और कुछ कलियाँ तो चटक भी गई हैं। बुद्धत्व के फूल खिल गए हैं। सहस्त्र दल कमल खिल गए हैं। ओशो ने जो मेहनत की है, वह व्यर्थ नहीं जायेगी।।

यह सन् 2001, नई सदी की शुरुआत है, ओशो जगत में अध्यात्म के जगत में फूलों के खिलने की शुरुआत है। ओशो की बगिया में बसन्त आ गया। ओशो ने जो मेहनत की थी, जो पानी सींचा था, जो खाद डाला था, जो बागुड़ लगाई थी इस बगीचे में, अब बसन्त आ गया। अब फूलों के खिलने का मौसम आ गया। समय तो लगता है और जितने विराट वृक्ष हों और फूल खिलने हों, जितनी महत सुवास उड़नी हो, उतना ही ज्यादा समय लगता है। ये कोई मौसमी फूल नहीं हैं कि आज बोये, 4 हफ्तों में पौधे आ गये और 6 हफ्तों में फूल खिल गए। 6 हफ्ते में जो फूल खिल जायेंगे, याद रखना वे तो महीने-दो महीने में सब विदा भी हो जायेंगे।

अध्यात्म का वृक्ष तो विराट वट वृक्ष के समान है जो हजारों वर्ष जियेगा। हजारों ही क्यों, यह तो सनातन वृक्ष है। अंकुर आने में भी वक्त लगता है। ओशो ने जो मेहनत की है, जो 'क्रान्ति बीज' हमारे हृदय की भूमि में बोए हैं, उनके खिलने का अब समय आ गया। क्रान्ति बीज किताब का नया संस्करण जब निकल रहा था, ओशो के शरीर छोड़ने के करीब 3 माह पूर्व तब ओशो ने उस किताब के

शीर्षक के नीचे एक उप-शीर्षक लिखवाया था- क्रान्ति बीज। मैं तो बो चला, देखना तुम कि बीज सिर्फ बीज ही न रह जायें। ओशो जैसा माली जिन बीजों को बोयेगा, क्या वे बीज बीज रह जायेंगे? कतई नहीं। ओशो ने इतना प्रेम का जल सींचा है, इतनी प्रज्ञा की खाद डाली है, ये बीज तो पनपने ही हैं। हाँ, एक बात जरूर है ओशो के देह में रहते हुए यह विराट घटना न घट सकी। क्योंकि ओशो को समय से पूर्व जाना पड़ा। अमरीकी सरकार ने जो जहर उन्हें दिया था, उस कारण से कम से कम 12 साल पहले उन्हें अपना शरीर त्यागना पड़ा। मेरा अनुमान है कि ओशो सन् 2002 तक जीते। उन्होंने जो बीज बोये थे अपनी आँखों के सामने वे फूल खिलते भी देखते और तब शायद यह प्रक्रिया बहुत तीव्र गति से होती। लेकिन ओशो के असमय विदा हो जाने से इस प्रक्रिया में थोड़ा विलम्ब तो हुआ। वह जितनी तीव्र गति से हो सकती थी, उतनी तीव्र गति से न हो पाई।

ओशो की मदद सूक्ष्म रूप में आज भी मौजूद है। उनकी विदेही उपस्थिति आज भी कार्य कर रही है। ये जो बुद्धत्व के फूल खिले हैं, यह मत सोचना कि तुम्हारी साधना से खिल गए हैं या हमारे मार्गदर्शन से खिल गए हैं। ये तो सब गौण ऊपरी-ऊपरी बातें हैं। बसन्त आया है, फूल खिलने ही थे और उस समय जो हवा चली तो तुम कहोगे कि इस हवा को श्रेय जाता है कि इस हवा ने कली को चटका दिया, फूल बना दिया। नहीं, यह तो संयोग की बात है। यह हवा न होती तो कोई और हवा चलती; कोई दूसरा झोंका होता। ये फूल खिलने ही थे। समय पक गया था। ठीक वैसी ही घटना घट रही है। और मुझे पूरी-पूरी आशा है कि आने वाले 10 साल के भीतर-भीतर विश्व की यह भयावह स्थिति पलट जायेगी। लेकिन यह किसी राजनीति से नहीं, किसी आन्दोलन से नहीं, यह कोई शान्ति के नारे लगाने से नहीं, विश्व शान्ति का झंडा उठाने से नहीं, यह समाधान होगा समाधि में बहुत लोगों के डूबने से। अगर तुम्हें कुछ करने जैसा लगता है तो बस एक ही काम करो, शीघ्र अति शीघ्र समाधि की गहराइयों में डूबो। अपने ऊपर श्रम करो। विश्व बहुत बड़ा

है, हम उसके साथ कुछ भी न कर सकेंगे और जो भी किया जायेगा वह राजनीति हो जायेगी।

तुम पूछते हो उसको सुधारने के लिए क्या करें? नहीं; मैं नहीं कहता कि सुधारने के लिए तुम कुछ भी करो। आज तक तो सुधारने का कोई काम सफल नहीं हो पाया है। उल्टा ही होता है। जो लोग समाज को सुधारने के लिए निकलते हैं, थोड़े दिनों के बाद वे खुद इतने बिगड़ जाते हैं कि समाज को उन्हें सुधारना पड़ता है। सभी समाज सुधारक इतने बिगड़ जाते हैं, इतने बिगड़ जाते हैं कि उन्हें सुधारने की जरूरत पड़ जाती है। नहीं, वह गोरखधंधा तो बहुत हो चुका, उस दिशा में मत जाना। जीवन की दो दिशाएँ हो सकती हैं- एक धर्म की, एक राजनीति की। राजनीति है दूसरे को बदलने का प्रयास और धर्म है आत्म-रूपान्तरण की कला। तुमने दूसरे को बदलने की कोशिश की तो जाने-अनजाने तुम राजनीति में उलझ जाओगे। मैं नहीं कहता हूँ कि सभी समाज सुधारक गलत इरादे से समाज सुधारने जाते हैं। उनके इरादे नेक ही होते हैं, लेकिन नेक इरादों से क्या होता है? अंग्रेजी में कहावत है कि– स्वर्ग का रास्ता शुभेच्छाओं से पटा पड़ा है। अकेली शुभेच्छा से क्या होगा? समझ भी तो चाहिए, समाधान भी तो चाहिए। कोई कितना ही चाहे कि समस्याओं को सुलझा दूँ, उसके नेक इरादों से क्या होगा? उसकी मंगल कामनाएँ, शुभकामनाएँ काम न आयेंगी। वह जिस रास्ते पर चला है वहाँ सिर्फ उलझाव हैं, टक्कर है, संघर्ष है और अन्ततः तुम जिससे लड़ोगे, वैसे ही तुम हो जाओगे। अपना शत्रु सोच-समझकर चुनना। क्योंकि धीरे-धीरे कालान्तर में तुम शत्रुओं जैसे ही हो जाओगे। अथवा, अगर तुम जीते तो इसका मतलब हुआ कि तुम शत्रु से भी ज्यादा खराब हो गए। नहीं तो जीत नहीं सकते थे। तुम शत्रु से भी बदतर स्थिति में पहुँच गए। उससे भी ज्यादा खतरनाक तुम हो गए।

आतंकवादी से जो जीतेगा निश्चित रूप से ही वह आतंकवादी से भी बड़ा आतंकवादी होगा। नहीं तो जीतेगा कैसे? बाहर अशुभ से जो भी लड़ने चलेगा, वह स्वयं ही अशुभ हो जायेगा। उस तरीके

से आज तक कोई काम न हुआ है और न भविष्य में कभी हो सकता है। एक ही उपाय है, आत्म-रूपान्तरण से गुजरो। हमारे भीतर राजनीति न रह जाये, हमारे भीतर चालाकी न रह जाये, हमारे भीतर अहंकार न रह जाये। हमारे भीतर संघर्ष की, हिंसा की, द्वेष की सारी वृत्तियाँ नष्ट हो जायें। अरिहंत बनो। अपने भीतर के शत्रुओं को नष्ट करो, और वे होते हैं समाधि में नष्ट। उनसे भी सीधे नहीं लड़ा जा सकता। ये काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष इनसे भी सीधे लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती, वरना हार जाओगे। परोक्ष लड़ाई होगी। तुम तो परमात्मा में डूबो, तुम तो तल्लीन होओ, समाधि में डूबते-डूबते-डूबते एक दिन तुम पाओगे कि कहाँ गया क्रोध, पता ही नहीं। कितने दिन बीत गए जबसे काम-वासना ने नहीं पकड़ा। याद भी न आयेगा, कितना समय बीत गया। लोभ कहाँ गया? मोह कहाँ गया? कुछ खबर नहीं। तुम तो परमात्मा में डूबो। अहंकार और उससे उत्पन्न ये जो षटरिपु हैं, ये सब अन्धकार के समान हैं। अन्धेरे से सीधा संघर्ष नहीं हो सकता। तुम तो दीपक जलाओ- समाधि का, तुम तो प्रकाश को फैलने दो- परमात्मा का और तुम पाओगे कि अहंकार पाया ही नहीं जाता। अंधेरा मिलता ही नहीं। दीपक लेकर ढूंढने चलोगे, अंधेरा कहीं भी नहीं मिलेगा। क्योंकि अंधेरा सिर्फ प्रकाश की अनुपस्थिति का नाम है। तुम दीपक जलाओ, 'अप्प दीपो भव' बुद्ध का अंतिम संदेश ही यही था। बुद्ध का प्रथम संदेश भी यही है, बुद्ध का मध्यम संदेश भी यही है। बहुत-बहुत रंगों-ढंगों से वही बात बार-बार कहते हैं।

तुम प्रश्न कितने ही पूछो, घूम-फिर कर जवाब एक ही होता है- जागो, ध्यान में डूबो, समाधि में तल्लीन रहो, परमात्मा में डूबो और परमात्मा हो जाओ। अगर विश्व की भयावह स्थिति को बदलना चाहते हो तो एकमात्र उपाय यही है। तुम डूबोगे परमात्मा में, तुम्हारे भीतर प्रकाश होगा, तुम्हारा अन्धेरा मिटेगा, तो शायद और तुम्हारे आस-पास कुछ बुझे दिये जल उठेंगे। ज्योति से ज्योति जले।

प्रश्न - 5 : ध्यान समाधि से लेकर परमहंश समाधि तक की इन बारह सीढ़ियों के बारे में कुछ बताएं।

ध्यान समाधि, पहला सोपान, समाधि से पहचान है। दूसरा सोपान सुरति समाधि, समाधि की गहराइयों में डुबकी है। तीसरा सोपान निरति समाधि, परमात्मा के प्रकाशमय रूप की खोज है। चौथी सीढ़ी अमृत समाधि, स्वयं के अमृत स्वरूप को पहचानने की कला है। पाँचवा सोपान दिव्य समाधि, परमात्मा के ऊर्जा रूप, रस रूप, सुगन्ध रूप और खुमारी रूप की पहचान है। उपनिषद के ऋषि जिसके लिए कहते हैं- 'रसोवैस:'। कबीर कहते हैं- 'पीवत रामरस, लगी खुमारी'। मीरा कहती है- 'मनुआ राम नाम रस पीजे'। उस दिव्यता की अनुभूति उसकी अलौकिक सुगन्ध से पहचान। छठवीं है चैतन्य समाधि। सभी दिव्य अनुभवों को जानने वाले ज्ञाता चैतन्य का ज्ञान। फिर सातवीं है आनन्द समाधि, सच्चिदानन्द की पहचान है। आनन्द परमात्मा की अंतिम परिभाषा, सच्चिदानन्द की आखिरी कड़ी है। उसके बाद आती है आठवीं प्रेम समाधि, जो व्यक्ति आनन्दित हो जाता है, केवल वही व्यक्ति प्रेमपूर्ण हो सकता है। सच पूछो तो दु:खी व्यक्ति प्रेम पाने की आकांक्षा से भरा होता है। वह प्रेम कर नहीं सकता। वह प्रेम को केवल लेना जानता है, देने की क्षमता उसकी अभी नहीं। दे तो केवल वही सकता है, जिसने आनंद को पा लिया हो। सच्चिदानन्द को जाने बगैर कोई प्रेमपूर्ण हो ही नहीं सकता। उसके पहले तो प्रेम सब धोखा है, बकवास है, सिर्फ बातचीत है, प्रेम के नाम पर दूसरे का शोषण है। केवल आनन्दित व्यक्ति जो अपने आप में आप्तकाम हो गया है, अब जिसे कुछ भी नहीं चाहिए, जिसकी कोई कामना न रही, केवल वही व्यक्ति प्रेमपूर्ण होता है।

इसलिए आनंद समाधि के बाद प्रेम समाधि रखी है और उसके बाद नौवीं अद्वैत समाधि। प्रेम के बाद ही अद्वैत घट सकता है।

'प्रेम गली अति सांकरी, तामै दो न समाय।'

जब तक परमात्मा से प्रेम न लग जाये, सारे जगत से, इस विराट अस्तित्व से प्रेम न हो जाये, तब तक अद्वैत न घट सकेगा। उसके

पहले अद्वैत की बातें केवल दार्शनिक सिद्धान्त हैं। प्रेम में डूबते-डूबते-डूबते दुई मिट जाती है। साधक और परमात्मा दो अलग-अलग नहीं रह जाते, एक ही हो जाते हैं। उस एकता की अनुभूति का नाम अद्वैत है, जहाँ दो नहीं रह जाते। उस अनुभव को अलग-अलग सन्तों ने अपने-अपने ढंग से व्यक्त किया है। भक्त कहेंगे कि मैं मिट गया, केवल भगवान ही शेष रहा। ध्यानी कहेंगे कि केवल मैं ही शेष रहा, मैं ही ब्रह्म हूँ। यह मैंने जाना। मेरे अतिरिक्त और कोई ब्रह्म नहीं है- 'अहम् ब्रह्मास्मि'। सामान्यत: ये दो प्रकार की घोषणाएँ होंगी- मैं ब्रह्म हूँ अथवा मैं हूँ ही नहीं, केवल परमात्मा है। बस तू ही तू है- 'तत्वमसि'।

एक तीसरी उद्घोषणा है- न मैं, न तू, 'हरि ओम तत्सत्'। वह परम सत्य है, वह। न इसमें मैं आया, न इसमें तू आया। तत् यानि वह 'हरिओम तत्सत्'। एक चौथे प्रकार की घोषणा है- न मैं, न तू, न वह, बल्कि यह 'दिस'। ओशो कि एक किताब है- 'दिस इज इट'। दूसरी किताब का शीर्षक है- 'दिस, दिस, दिस, ए थाउजैन्ड टाइम्स दिस'। यह मुझसे पूछोगे तो मुझे यह चौथी बात ज्यादा प्रीतिकर लगती है। मैं कहने में कहीं न कहीं तू का भाव मौजूद रहता ही है। कितना ही कहो- तत्वमसि। तू में कहीं न कहीं मैं का भाव मौजूद रहता ही है, होगा बहुत सूक्ष्म। 'वह' कहो, 'हरिओम तत्सत', तो बड़ी दूर की बात लगती है कि परमात्मा कहीं दूर। नहीं; परमात्मा कहीं दूर नहीं है। वह कहने का क्या अर्थ? सबसे प्रीतिकर, सबसे प्यारा एक्सप्रैशन जो मुझे लगता है- 'यह'। ओशो कहते हैं कि अभी और यहीं, हियर एण्ड नाओ। तो परम अवस्था की चार प्रकार से अभिव्यक्ति की जा सकती है। नौवीं अद्वैत समाधि में 'मैं कौन हूं' का उत्तर मिल जाता है। दसवीं कैवल्य 'क्या है अस्तित्व' तथा ग्यारवीं निर्वाण समाधि में 'अनस्तित्व-महाशून्य' का ज्ञान हो जाता है। तब बारहवीं सहज दशा निर्मित हो जाती है- साधो, सहज समाधि भली।

ये जो बारह सोपान हैं समाधि के, इन्हें एक विशेष क्रम से जमाया गया है, वैज्ञानिक तरीके से, क्रमिक तरीके से। जो सर्वाधिक सरल है उसे सबसे पहले रखा है। ध्यान समाधि सर्वाधिक सरल है, उसके बाद सुरति समाधि। आगे जैसे-जैसे बढ़ते है, थोड़ा-थोड़ा

कठिन मामला होता जाता है। आनन्द समाधि के बाद फिर मामला बड़ा सरल हो जाता है। ध्यान समाधि, सुरति समाधि, पहले दो सोपान सरल हैं प्रेम समाधि और अद्वैत समाधि भी बड़े सरल हैं। बीच के चार सोपानों में थोड़ा-सा प्रयास जरूरी है। लेकिन जो व्यक्ति सुरति समाधि में डूब गया, वह व्यक्ति निरति समाधि में डूबने की क्षमता जुटा ही लेता है। उसकी चेतना धीरे-धीरे इतनी सूक्ष्म हो जाती है कि वह फिर नए पड़ाव तक यात्रा कर सके। उन्हें एक विशेष क्रम से जमाया गया है, जो सर्वाधिक सरल है वह सबसे पहले, ताकि धीरे-धीरे हमारी क्षमता का विकास होता चले और हम आगे के सोपान पर जाने की तैयारी कर सकें। अन्ततः तो अभी और यहीं पर पहुँच जाना है।

'न बीते कल में, न भावी कल में,
जीवन है आज, अभी और इसी पल में।
जीवन ही है प्रभु, और न खोजो कहीं,
प्रेम है द्वार प्रभु का, खोलो अभी यहीं।
जग से न भागो रे, भोगो और जागो,
यही है तपस्या, जीवन मत त्यागो ।
होश की कला सीखो, जिन्दगी संवारो,
प्यार के रंगों से दुनिया सजा लो।
न बीते कल में, न भावी कल में,
जीवन है आज, अभी और इसी पल में।

यह समाधि की यात्रा वर्तमान के इस क्षण में गहरे से गहरे डूबने की यात्रा है। और गहरे, और गहरे, कैसे बढ़ते चलें? बुद्ध कहते थे- 'चरैवेति-चरैवेति'। चलते चलो, चलते चलो। ओशो ने एक शेर अपने प्रवचनों में कई बार कहा है-

सितारों के आगे जहाँ और भी है।
अभी इश्क के इम्तिहाँ और भी हैं।।

तो तुम जहाँ भी हो, वहीं से एक कदम और चलो, थोड़ा और, थोड़ा और, जहाँ भी हो वहीं से। साक्षीभाव साध लिया है, चलो बहुत सुन्दर हुआ। अब साक्षीभाव के आगे तल्लीनता की साधना,

तथाताभाव की साधना। तथाताभाव सध गया? चलो अब श्रवण करें परमात्मा के परम संगीत का। संगीत को सुन लिया, चलो और दूसरे आयाम में प्रवेश करें- प्रभु के दर्शन का। चलते चलो, चलते चलो, जहाँ हो वहाँ से एक कदम और। और हजारों मील की यात्रा भी एक-एक कदम करके पूरी हो जाती है। कभी यह मत सोचना कि यात्रा बहुत लम्बी है और परमात्मा है बहुत दूर। मंजिल कितनी ही दूर हो, एक बार में तो एक ही कदम चलना होता है। एक बार में दो कदम तो कोई भी व्यक्ति नहीं चल सकता और इतनी क्षमता तो हम सब में है कि एक बार में एक कदम उठा सकें। इतनी क्षमता तो प्रत्येक व्यक्ति में है। इसलिए खूब आशा और उम्मीद से भरो। हम बस एक-एक कदम उठा सकते हैं, और एक-एक कदम चलते-चलते परमात्मा की मंजिल मिल जाती है। वह मिल जाये, फिर तरंगें फैलनी शुरू होती हैं। फिर विश्व की यह भयावह स्थिति बदल सकती है। लेकिन वह जिम्मेवारी हम सब ओशो संन्यासियों पर है। ओशो के प्रेमियों पर है। क्योंकि हमीं लोग इस दुनिया में थोड़े-से जागे हुए लोग हैं। अगर हम थोड़ा-सा संभल गए, तो हम पूरी दुनिया की दशा को पलट सकते हैं। यह दुनिया एक स्वर्ग बन सकती है। यह दुनिया महज गम ही गम नहीं है। बस थोड़ी-सी कोशिश, एक कदम। फिर एक कदम! 'चरेवेति, चरेवेति, चरेवेति'।

धन्यवाद।

(नोट-इस प्रवचन के पश्चात् 'ऊर्जा समाधि' तथा 'परमहंस समाधि' के सोपान इस यात्रा में और जुड़ चुके हैं। फिर समाधि के बाद सुमिरन की यात्रा होती है।)

ग्यारहवां प्रवचन

जीवन जीने की कला व समाधि विज्ञान

मुख्य बिन्दु :

- जीवन जीने की कला
- परिवारजनों से झगड़ा, किंतु अजनबी से सद्व्यवहार
- दोनों हाथ उलीचिए, यही संतन को काम
- समाधि क्या है?
- मंत्र साधना के बारे में
- समाधि साधना के परिणाम
- आनन्द पाने का क्या लक्ष्य?

प्रश्न : जीवन जीने की कला संक्षेप में समझाएं?

उत्तर : एक चुटकला सुनाता हूँ पहले, फिर संक्षेप में ही समझ में आ जाएगी बात। एक विद्यार्थी स्कूल में पहुँचा। एक पैर में लाल जूता पहना था, एक में काले रंग का। शिक्षक ने कहा कि नालायक एक काला और एक लाल जूता पहन कर क्यों आए हो? शिक्षक ने कहा कि

जाओ और घर जाकर जूते बदलकर आओ। उस विद्यार्थी ने कहा कि सर घर जाने से भी कोई फायदा नहीं। घर में भी एक लाल और एक काला ही पड़ा हुआ है। जीवन जीने की कला बस इतनी ही है कि लाल और लाल को मिलाकर एक जोड़ी बना लो और काले-काले की एक जोड़ी बना लो। जिन्दगी में हमको सब कुछ मिला हुआ है। सिर्फ हमें पेअर बनानी नहीं आ रही। हम ठीक से चीजों को जमा नहीं पा रहे हैं।

ऐसा समझो कि एक गृहणी के पास कुकिंग गैस भी है, तवा भी है, बेलन भी है, आटा भी है, नमक भी है, बेसन भी है, मिर्च, मसाला, शक्कर सब कुछ है और उसे भोजन पकाने की कला नहीं आती। तो क्या होगा? चाय में वह धनिया-मिर्च डाल देगी। रोटी उसे बेलना नहीं आता, जला देगी; और हो सकता है अपना हाथ भी जला ले। सब्जी उसको काटना नहीं आता। सम्भव है भिण्डी काटते-काटते अपनी लेडीज-फिंगर्स ही काट ले। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि भिण्डी गलत है, कि आटा गलत है, कि नमक गलत है। तुम आटा बहुत कम, नमक बहुत ज्यादा कर दोगी; तो रोटी खाने योग्य नहीं बनेगी। किसी को अगर कला न आती हो तो इन्हीं सब चीजों से ऐसा भोजन पकाया जा सकता है जो नुकसानदायी हो, जो बिल्कुल स्वादिष्ट न हो, जो बिल्कुल खाने योग्य न हो, जिसको खाकर पेट खराब हो जाए और इन्हीं चीजों से ऐसा भोजन भी बनाया जा सकता है, जो स्वादिष्ट हो, जो स्वास्थ्यदायी हो। चीजें वही के वही हैं। बस ठीक अनुपात में उनको जमाना है।

तो प्यारे मित्रो, वही मैं आपसे कहना चाहता हूँ- जीवन में हमें सब कुछ मिला है, जरा ठीक रेशो में, ठीक अनुपात में जमाना है। अभी हम लाल जूता और काला जूता एक-एक पहने हुए हैं, उसकी वजह से सारी गड़बड़ हो गई है। मैं आपसे नहीं कहता कि क्रोध बुरा है। क्रोध उपयोगी है। सही जगह पर इस्तेमाल करो तो। राम भी क्रोध करते हैं रावण पर। उपयोगी है। जीसस क्राइस्ट जिन्होंने प्रेम की इतनी शिक्षा दी। एक दिन जीसस भी कोड़ा लेकर पहुँच जाते हैं यहूदियों के मंदिर में। यहूदियों के मंदिरों में सूदखोरों का अड्डा था। वहाँ के जितने पुरोहित थे, सब ब्याज का धन्धा किया करते थे। गरीब लोगों को उधार देते थे और उनकी ब्याज की दर इतनी ज्यादा थी। गाँव के लोग मूलधन तो चुका ही नहीं

सकते थे ब्याज चुकाना भी मुश्किल था। पीढ़ी दर पीढ़ी उधारी चलती आ रही थी। पूरा इलाका कर्ज में डूबा हुआ था। केवल यहूदियों का मंदिर और धनी-और धनी होता जाता था। जीसस क्राइस्ट कोड़ा लेकर पहुँचते हैं और उन सूदखोरों के तख्ते पलट देते हैं। उनकी दुकानें उलट देते हैं और कोड़े मार-मार के खदेड़कर उनको बाहर कर देते हैं।

कौन कहता है कि क्रोध बुरा है। महात्मा गांधी अग्रेजों पर नाराज थे। अंग्रेजों ने साउथ अफ्रीका में रेलवे के फर्स्ट क्लास से उनका सामान उठा कर बाहर फेंक दिया था कि काले आदमियों को फस्ट क्लास में नहीं बैठने देते। महात्मा गाँधी ने अंग्रेजों को उठा कर भारत देश से बाहर फेंक दिया। गोरे आदमियों को यहाँ राज्य नहीं करने देते। क्या महात्मा गाँधी का क्रोध खराब है। सही जगह हर चीज का उपयोग किया जा सकता है। न तो प्रेम सदा अच्छा होता है और न क्रोध अच्छा होता है। आप अपने बच्चों को खूब ज्यादा लाड़-प्यार करो। क्या वह अच्छा होगा? आप उनको कोई अनुशासन न दो। उनको सभ्यता न सिखाओ। जो वे कहें वैसे ही करते जाओ। हर बच्चा सोचता है कि काश मेरे पिता जी की आइस्क्रीम की दुकान होती। बच्चे चाहते हैं कि वे आइस्क्रीम ही आइस्क्रीम खाएं। कहाँ बीच-बीच में सब्जी और रोटी ले आते हैं फालतू की। चॉकलेट और आइस्क्रीम ही होता दुनिया में बस और कुछ होता ही नहीं दुनिया में तो कितना मजा होता। क्या आप बच्चे की इच्छा पूरी कर दोगे? क्या प्रेम सदा अच्छा है? नहीं, न प्रेम सदा अच्छा है और न क्रोध हमेशा अच्छा है। ठीक जगह, ठीक चीज का उपयोग करना। विवेक पूर्वक, बस इसी को मैं जीवन की कला कह रहा हूँ। काले जूते के साथ काला जूता पहनना और लाल जूते के साथ लाल जूता। रोटी में जितना नमक डाला जाता है, उतना ही डालना। दाल में जो चीजें डाली जाती हैं वे दाल में डालना। चाय में जो डालना है वे चाय में डालना। कॉम्बीनेशन को बदल मत देना कि हल्दी और जीरा और धनिया डाल दिया चाय में और कॉफी का पाउडर डाल दिया दाल में। सब गुड़गोबर हो जाएगा। बस चीजों का काम्बीनेशन बदलना है कुछ और नहीं।

प्रश्न- परिवारजनों, मित्रों और रिश्तेदारों से मेरा अक्सर झगड़ा हो जाता है किन्तु अजनबी लोगों के बीच में मैं अच्छा व्यवहार

करता हूँ और सभी लोग मुझे एक अच्छा आदमी समझते हैं?

उत्तर : महत्वपूर्ण सवाल है। एक व्यक्ति का नहीं, मैं समझता हूँ अधिकांश लोगों पर लागू होता है। जहाँ प्रेम का जूता पहनना चाहिए था, वहाँ आप क्रोध का जूता पहन लेते हैं। परिवारजनों, रिश्तेदारों और मित्रों से कलह हो जाती है, झगड़ा हो जाता है। नए लोग, अजनबी लोग इन्हें बहुत अच्छा आदमी समझते हैं। उनके साथ सदा बड़ा अच्छा सद्‌व्यवहार करते हैं। कारण आप अपने भीतर जरा टटोलो। क्या आप भी ऐसे ही करते हो? जरूर करते हो। मात्रा थोड़ी बहुत कम या ज्यादा होगी। आप भी यही करते हो। इसका गहरा कारण खोजो कहाँ है? इसका गहरा कारण है, जिन्हें हम अपना कहते हैं। उनके साथ हमारी अपेक्षाएँ, जुड़ी हैं। पति उम्मीद करता है कि पत्नी को ऐसा-ऐसा करना चाहिए। बाप अपेक्षा कर रहा है कि बेटे को कैसा होना चाहिए। बेटा अपेक्षा कर रहा है कि बाप को कैसा होना चाहिए।

मैंने सुना है एक आठ साल का बच्चा स्कूल से लौटते हुए एक किताब की दुकान पर रुका। वहाँ उसने एक किताब खरीदी। किताब का शीर्षक था बच्चों का ठीक से लालन-पालन कैसे किया जाए। दुकानदार ने कहा कि बेटा यह किताब तुम्हारे काम की नहीं है। तुम इसका क्या करोगे? यह तो बड़ों के काम की है। उसने कहा कि मैं पढ़ कर देखना चाहता हूँ कि मेरा ठीक से लालन-पालन हो रहा है कि नहीं। बेटे की अपेक्षाएँ हैं बाप से। बाप कैसा होना चाहिए। भाई की अपेक्षा है भाई से। जहाँ अपेक्षा है, वहाँ कलह है, वहाँ झगड़ा है। वहाँ क्रोध आएगा। क्यों? दूसरे लोग आपकी अपेक्षाएँ पूरी करने के लिए पैदा नहीं हुए। उनकी अपनी जिन्दगी की अपनी इच्छाएँ हैं, अपनी आकांक्षाएँ हैं। उनकी अपनी जिन्दगी है। उनकी अपनी स्वतन्त्रता है। वे आपकी मर्जी के गुलाम होकर नहीं जीएंगे। कोई बेटा अपने बाप की इच्छा पूरी करने नहीं आया है इस दुनिया में, उसका अपना जीवन है। उसकी अपनी पिछले जन्मों की कहानी है। उसकी अपनी कामनाएँ और वासनाएँ हैं। लेकिन बाप सोच रहा है कि मेरे अनुसार चले। पति सोच रहा है कि पत्नी मेरे अनुसार चले। पत्नी सोच रही है पति मेरे अनुसार चले।

अभी कल परसों किसी ने मुझे एक एस. एम. एस. भेजा कि

ओसामा बिन लादेन और वफादार पति में क्या समानता है। उसका उत्तर है कि दोनों एक दूसरे से नहीं मिलते। हर पत्नी को उम्मीद है कि उसका पति वफादार हो। करते रहो उम्मीद। फिर दु:खी होओगे। फिर लड़ाई-झगड़ा होगा, फिर कलह होगी। न ओसामा बिन लादेन मिलता न वफादार पति मिलता। एक और एस. एम. एस. उसी व्यक्ति ने भेजा है कि डायनासोर और शरीफ लड़की में क्या समानता है? आधुनिक युग में दोनों ही खो गए हैं। खोजते रहो। मैं देखता हूँ लोगों को कई लोग कहते हैं कि लड़के के लिए तीन साल हो गए बहू खोजते-खोजते कोई ढंग की लड़की ही नहीं मिलती। लड़के की उम्र बढ़ती जा रही है। शादी की उम्र बीतने के करीब आ गई। नहीं मिल रही। ठीक कह रहे हैं जो एस. एम. एस. आया है कि न डायनासोर मिलते अब, न शरीफ लड़की मिलती।

हमारी एक्सपैकटेशन जिनसे हमारी पहचान है। जिनके हम निकट हैं। उनके प्रति हमारी अपेक्षाएँ बहुत ज्यादा हैं। अजनबी के साथ हमारी कोई अपेक्षा नहीं है। आप रेल में यात्रा कर रहे हैं। बगल में एक आदमी बैठा है। आपने उससे नाम पता पूछा, कहाँ जा रहे हो, क्या है? साथ-साथ आपने चाय पी। उसने अपना टिफिन खोला और कहा कि आइये साथ में नाश्ता करते हैं। खाली समय था ताश खेल लिया उसके साथ। अब इस आदमी के साथ आपका कोई एक्सपैकटेशन नहीं है। अगर उसने चाय-नाश्ते में आपको इन्वाइट किया है तो आपके मन में धन्यवाद का भाव भी आएगा। लेकिन आपकी पत्नी पिछले सात सालों से आपको भोजन करा रही है। आपकी माँ पिछले चालीस सालों से भोजन करा रही है। उनके प्रति धन्यवाद नहीं आता। उसमें हम नुक्स निकालेंगे कि तूने दाल में नमक ज्यादा डाल दिया, कि चाय में शक्कर कम क्यों है? कि ठण्डी चाय दी है आज। उस अजनबी आदमी से आपको कोई उम्मीद ही नहीं थी। चलो ठण्डी चाय मिली तो ठीक। चाय तो मिली। ज्यादा नमक की दाल ही सही। उससे कोई उम्मीद ही नहीं थी। समथिंग इज बैटर दैन नथिंग। इस आदमी ने प्रेमपूर्वक आमंत्रण दिया कि आओ बैठ कर ताश खेलते हैं। क्या इतना ही बहुत है? हम उसी के लिए धन्यवाद से भर गए।

तो याद रखना आप जो कह रहे हैं कि अजनबियों के बीच मैं अच्छा व्यवहार करता हूँ। कारण। वहाँ कोई अपेक्षा, एक्सपैक्टेशन, कोई उम्मीद आपकी नहीं होती। अब आप सूत्र को समझ सकते हैं। अपने लोगों के बीच, परिवार के बीच, रिश्तेदारों के बीच अगर आप चाहते हैं सुखी होने की कला तो आपको क्या करना होगा? ड्रॉप यूअर एक्सपैक्टेशन। अपेक्षा न करें। जिसने आपके लिए जो किया है उसके लिए धन्यवाद भाव से भरें, अहोभाव से भरें। अगर वह व्यक्ति इतना भी न करता तो आप क्या करते? आपके पिता ने आपके लिए क्या कुछ नहीं किया? ठीक है कभी-कभी उन्होंने कोई ऐसे काम भी किए, जो आपको पसन्द नहीं थे। आपके भाई ने आपके लिए क्या-क्या नहीं किया? ठीक है दो चार बातें ऐसी भी हुईं जो आपको अच्छी नहीं लगीं। छोड़ो दो चार बातों को हजारों बातें ऐसी हैं जो आपके जीवन के लिए सहयोगी थीं।

लोग आते हैं मेरे पास शिविर में। मैं पूछता हूँ तुम्हारी जिन्दगी की सबसे दुःखद घटना क्या है? याद करो और बताओ। अक्सर लोग बताते है कि मैं पाँच साल का था और पिताजी ने एक चांटा मार दिया था। उसको मैं भूल नहीं पाता। अब ये सज्जन जो कह रहे हैं कि उनको चांटा मारा था, अब उनकी खुद की उम्र पचास साल है, साठ साल है। मैं उनसे पूछता हूँ कि पिताजी आपके हैं अभी? वे कहते हैं कि नहीं पिता जी तो मेरे स्वर्गवासी हो गए। न वे सज्जन बचे। पचास साल पुरानी बात, पैंत्तालीस साल पुरानी बात ये कह रहे हैं कि पिता जी ने चांटा मारा था। उनके प्रति क्रोध की भावना आज भी मेरे मन में है और बड़ा दुःख है इस बात का कि मुझे चांटा मारा था। मैं पूछता हूँ कि चलो अच्छा आपके बच्चे कितने हैं? एक लड़की है। क्या आपको उनको कभी चांटा मारना नहीं पड़ता? उनको सुधारने के लिए मारना ही पड़ता है। आप अपने लिए अलग तर्क बता रहे हो। अपने पिताजी के लिए अलग। आपको अपने बच्चे को सुधारने के लिए मारना पड़ता है। आपके पिता जी पागल थे, जो आपको मारा था। उन्होंने भी किसी कारण से ही मारा होगा।

आपके पिताजी ने आपके लिए क्या-क्या किया है? जरा वह तो याद करो। आपको जन्म दिया। आपको पाला-पोसा। कितनी बीमारियों में आपका इलाज करवाया। कभी रात भर आपके पास बैठ कर जागे होंगे

बुखार में। स्कूल पढ़ने लिखने भेजा। आपके लिए नौकरी की। आपके लिए मकान बनाकर आपके लिए छोड़ गए। आपके नाम वसीयत लिख कर छोड़ गए। कितना कुछ किया आपके लिए। वह कुछ याद नहीं है। एक चीज याद है वह चांटा क्यों मारा? अपनों के साथ हमारी अपेक्षाएँ बहुत ज्यादा हैं। इसलिए वहाँ पर तनाव है, दु:ख है, कलह है, क्रोध है। अजनबियों के साथ हमारी कोई अपेक्षा नहीं है। तो फार्मूला समझ लो। जहाँ दु:ख है, वहाँ अपेक्षा है। इसलिए अपनों के साथ भी अपेक्षा रखना छोड़ दो। एक जिन्दगी का सफर। ये पृथ्वी एक बड़ी ट्रेन है। यहाँ हम सभी तो अजनबी हैं। थोड़ी देर के लिए मिले हैं। प्रेम से, भाईचारे से, बिना अपेक्षा से हम समय को कांटें। जीवन के इस सफर को तो जीवन में आनन्द हो जाए।

प्रश्न : एक मित्र ने पूछा है कि इतने गुरु, पैगम्बर, तीर्थंकर आदि होते हैं। फिर भी मनुष्य जाति सुधरती क्यों नहीं?

उत्तर : क्योंकि लोग सीखने के लिए तैयार ही नहीं होते। गौर से सुनना- सिखाने वाले कुछ सिखाते हैं और हम कुछ उल्टा सीख लेते हैं। महावीर नग्न रहे और आप जानते हैं महावीर को मानने वाले जो जैन हैं, वे सबसे ज्यादा कपड़े की दुकान करते हैं। भारत के सबसे ज्यादा वस्त्र व्यवसायी जैन हैं। उनके गुरु नग्न रहे, उन्होंने वस्त्र छोड़ दिए थे और जैनों का एक ही काम है कपड़ा बेचना। बड़ी विचित्र बात है। उन्होंने जो सिखाया उसका ठीक उल्टा हमने किया। जीसस ने कहा था कि कोई तुम्हारे एक गाल पर चांटा मारे तो दूसरा गाल उसके सामने कर देना। कोई तुम्हारा कोट छीने तो अपनी कमीज भी उसे दे देना। पता नहीं बेचारा संकोचवश मांग न रहा हो और इसाइयों ने इस धरती पर जो कोहराम मचाया है पिछले दो हजार सालों से। जितने यहूदियों की हत्या इसाइयों ने की है उसका कोई हिसाब नहीं।

प्रथम विश्व युद्ध जिसमें करोड़ों-करोड़ों लोग मारे गए। इन्हीं इसाई मुल्कों की कृपा से हुआ। दूसरा विश्व युद्ध जो प्रथम विश्व युद्ध से भी ज्यादा भयानक और खतरनाक था; इन्हीं इसाई मुल्कों की कृपा से हुआ और इनके गुरु ने इनको क्या समझाया था। कोई तुम्हारे एक गाल पर चांटा मारे तो दूसरा गाल आगे कर देना और अगर तीसरा विश्व युद्ध

कभी होगा तो इन्हीं इसाइयों की वजह् से होगा।

तो मत पूछो कि इतने धर्म के शिक्षक आते हैं फिर भी दुनिया बदलती क्यों नहीं, सुधरती क्यों नहीं? हम उनकी बात सुनते कहाँ हैं। हम तो अक्सर उल्टा कर देते हैं। बिल्कुल ठीक उल्टा कर देते हैं। मैंने सुना है एक अंग्रेजी के शिक्षक ने छात्र से पूछा– 'एकटिव वाइस का पैसिव वाइस बनाओ।' आई मेड ए मिस्टेक। इसका पैसिव वाइस बनाओ। छात्र ने कहा आई वाज मेड बाई मिस्टेक। हम कुछ ऐसा उल्टा–सीधा सीखते हैं। सिखाया कुछ गया था, हम कुछ और बड़ी भारी मिस्टेक कर देते हैं। एक संस्कृत का शिक्षक पूछ रहा है– तमसो मा ज्योतिर्गमय का अर्थ। एक लड़की ने कहा कि तमसो मा ज्योतिर्गमय का अर्थ है– तुम सो जाओ माँ मैं ज्योति के घर जा रही हूँ। सिखाने वाले ने क्या सिखाया और हमने क्या सीखा? उसमें जमीन–आसमान का अन्तर है।

प्रश्न : कबीर साहब ने एक जगह कहा कि दोनों हाथ उलीचिए, यही संतन को काम और एक अन्य जगह बोला है कि मन मस्त हुआ तब क्यों बोले? अर्थात् चुप रहो बोलने की कोई जरूरत नहीं। ये विरोधाभासी वक्तव्य क्यों?

उत्तर : अलग–अलग परिस्थितियों में दिए गए स्टेटमैन्टस हैं। कबीर साहब का कोई नया शिष्य अभी–अभी ध्यान में डूबा होगा, अभी–अभी आनन्द को पाया होगा उसने, अभी–अभी मस्ती छाई होगी खुमारी की इसलिए उससे कहा है सम्भाल कर रखना।

हीरा पायो, गांठ गठियाओ, बार-बार क्यों खोले,
मन मस्त हुआ तब क्यों बोले।

कह रहे हैं इस हीरे को उछालते न फिरो, छुपा लो। जिस चीज को हम छुपाते हैं, वह हमारे भीतर गहरी चली जाती है। जिस चीज को हम प्रकट करते हैं, बताते हैं सबको, वह उथली हो जाती है। सतह पर आ जाती है। कई बार आपने देखा आपके अन्दर कोई दु:ख है, कोई चिन्ता है। अगर किसी परिचित को बता देते हैं तो मन हल्का हो जाता है। जो बात आपने कह दी वह निकल गई और सिर का भार उतर गया। पश्चिम में तो मनोविज्ञान का सारा धंधा इसी कला पर विकसित हुआ है। सबसे मंहगा व्यवसाय है इस समय। साइक्रेटिस्ट और मनोवैज्ञानिक क्या करता

है? सिर्फ मरीज को लिटा कर उसकी सुन लेता है। भारत में तो अभी जरूरत नहीं है। लोग ऐसे ही सुनाते रहते हैं अपनी दु:ख कथा। पश्चिम में कोई किसी की सुनने को राजी नहीं है। परिवार बचा नहीं, परिवार टूट गया। संयुक्त परिवार पचास साल पहले चला गया था। अब एकल परिवार था, वह भी गया। स्वीडन जैसे शहर में तो अब शादी भी बन्द हो गई। कानूनी रूप से समाप्त हो गई। क्यों? क्योंकि कोई शादी कर ही नहीं रहा। वे रजिस्ट्रार काहे को रजिस्टर लिए बैठा हैं। कोई आता ही नहीं है। कई साल गुजर गए न शादी हो रही है, न तलाक हो रहा है। परिवार ही छिन्न-भिन्न हो गया। सब अकेले-अकेले हो गए। कोई किसी को अपना दु:ख दर्द बता नहीं सकता। कोई किसी की सुनने को राजी नहीं है इसलिए तो प्रोफेशनल सुनने वाले हुए हैं। वे हजारों डालर फीस लेकर सिर्फ इतना ही कहते हैं कि लेट जाओ। वे खुद पर्दे के पीछे बैठ जाते हैं। भगवान जाने वे सुन भी रहे हैं कि नहीं सुन रहे। कोच के पीछे तुम अपनी कहानी कहो क्या तकलीफ है बोलते जाओ? पता नहीं वे सज्जन उठ कर चले भी गए चाय-नाश्ता करने। पीछे हो सकता है टेपरिकाडर ही लगा हो। उसमें से बीच-बीच में आवाज आए कि अच्छा ठीक है, हो रहा है। लेकिन यह आदमी कह कर हल्का हो जाता है। जो बात हम कह देते हैं, वह बाहर निकल जाती है। हमारे भीतर से खत्म हो जाती है और इसका ठीक उल्टा है कि जिस चीज को आप छुपाओगे वह भीतर गहरी जड़ें जमा लेती है। आपको किसी से प्रेम हो गया, आप उस प्रेम को छिपाते हो और इसको गुप्त रखने की कोशिश में ही वह प्रेम बहुत गहरा हो जाता है। अगर आप इसको उछालते फिरो, सड़क छाप मजनू बन कर घूमो तो आपका प्रेम उथला हो जाएगा। आपका प्रेम नष्ट हो जाएगा। बचेगा भी नहीं। प्रेम में एक गोपनीयता का तत्त्व है। जिस चीज को हम छुपाते हैं, वह गहरी हो जाती है। तो कबीर साहब के किसी शिष्य को नई-नई समाधि लगी होगी, नया-नया आनन्द और मस्ती छाई होगी। तो कबीर साहब ने कहा कि-

मन मस्त हुआ तब क्यों बोले।
हीरा पायो गाठ गठियाओ,
बार-बार क्यों खोले।

छुपा लो। भीतर हृदय में गांठ बांध लो। बात ही मत करना इसकी।

और दूसरा जो वचन है, आपने उदाहरण दिया है कि कहते हैं कबीर

'दोनों हाथ उलीचिए, यही संतन को काम।'

यह कहा होगा किसी शिष्य को जो समाधि में बहुत डूब चुका। परमानन्द में सराबोर हो गया। अब इसके आनन्द के खोने की कोई सम्भावना नहीं है। जड़ें बहुत गहरी जम गई हैं। अब इसका काम है उलीचे, बाँटे। अब इस पेड़ में फूल आ गए हैं और कहा जा सकता है कि सुवास को उड़ने दो।

'दोनों हाथ उलिचिए, यही संतन को काम।'

अब इस आनन्द को छुपाना नहीं। लुटाओ, बांटो। गहरा कुँआ खुद गया है। बड़े गहरे जल स्रोत हैं कुएँ में। उलीचो पानी। जितना और उलीचोगे उतना और ताजा पानी आता जाएगा। कोई कमी नहीं पड़ने वाली। अगर नहीं उलीचोगे, तो कुएँ का पानी बासा हो जाएगा, सड़ जाएगा।

संतों के वचनों में अक्सर आप पाएंगे विरोधाभासी स्टेटमैन्ट। लेकिन याद रखना वे अलग-अलग परिस्थिति में भिन्न-भिन्न लोगों से कहे गए हैं। उसमें कुछ विरोधाभास नहीं है। यह तो ऐसा ही हुआ कि आप किसी डॉक्टर के क्लीनिक में जाकर बैठ जाओ, सुबह से शाम तक मरीजों से जो कहता है वह नोट्स बनाते जाओ और शाम को आप बड़ी मुश्किल में पड़ जाओगे कि डॉकटर ने किसी से कहा कि खूब व्यायाम करो, घन्टा भर दौड़ा करें जब तक पसीना-पसीना न हो जाओ। किसी दूसरे मरीज से कहा कि आपको हिलना-डुलना भी नहीं है, बाथरूम भी नहीं जाना है। बिल्कुल कम्प्लीट बैड रैस्ट। किसी से उसने कहा कि भाई अच्छे से खाओ पीओ। हाई प्रोटीन डाईट लें। मक्खन, घी इत्यादि खाया करें। किसी मरीज से कहा कि खबरदार जो घी, मक्खन, तेल को हाथ लगाया। बिल्कुल कोलस्ट्राल फ्री डाईट लेना है आपको। उबली सब्जी खाओ। आप दिन भर के अगर नोट्स बनाओ तो बड़ी परेशानी हो जाएगी कि इसमें से कौन सी बात मानें और ये तो बड़े विरोधाभासी वक्तव्य हैं। किसी से कह रहे हैं कि घन्टे भर व्यायाम करो, दौड़ो और किसी से कह रहे हैं कि बिल्कुल हिलना डुलना भी नहीं है। किसी से कह रहे हैं कि खूब खाओ पीओ, किसी से कह रहे हैं कि डाइटिंग करनी पड़ेगी, एकदम आधा खाना कर दो। अलग-अलग परिस्थिति में अलग-अलग

बातें कहीं गई हैं। जिनसे कहा गया है, उनका रोग अलग-अलग था। ठीक ऐसे ही संतों के वचन हैं। उसमें से कोई जनरल फार्मूला नहीं निकल सकता। हम अक्सर कोशिश करते हैं कि शास्त्र का अध्ययन करके, हम उसमें से कुछ सिद्धांत निकाल लें। वे सिद्धांत किसी के काम नहीं आएंगे। हम कोई एवरेज, औसत सिद्धांत निकालने की कोशिश करते हैं। इसलिए धर्मशास्त्र कभी काम नहीं आते। आप मेडिकल साइंस की किताब पढ़ करके अपना ट्रीटमैन्ट नहीं कर सकते। कोई डॉक्टर ही चाहिए। उसी से पूछना पड़ेगा कि क्या करें, क्या न करें?

सर्जरी की किताब पढ़ कर के आप सोचो कि कोई बात नहीं कि ब्रेन कैंसर है। अरे सर्जरी की किताब हम जाकर पढ़ लेंगे। डॉक्टर ने भी तो किताब में से ही पढ़ा है। हम खुद ही अपना ऑपरेशन कर लेंगे। यह नहीं हो सकेगा। किताब पढ़कर यह काम नहीं होगा। जब छोटे-मोटे काम नहीं हो सकते तो तुम क्या समझते हो अध्यात्म जो कि सबसे बड़ा ऑपरेशन है, ब्रेन का आपरेशन नहीं और गहरे अहंकार का आपरेशन है। तुम्हारा तो पूरा ज्ञान का भण्डार है। तुम्हारी धारणा, तुम्हारे विश्वास, तुम्हारे विचार उन सबकी सर्जरी करनी होगी। भारी कांट-छांट। शास्त्र पढ़ कर न होगा। इसलिए संतों के वचनों में कोई विरोधाभास दिखाई दे बस यही समझना कि हमारे समझने में कुछ भूल हो रही है। वे अलग-अलग परिस्थिति में दिए गए वक्तव्य हैं।

प्रश्न : एक मित्र ने पूछा है कि समाधि क्या है?

उत्तर : इस प्रश्न का उत्तर देने के पहले समझ लो। समाधि का जो उल्टा होता है व्याधि। व्याधि क्या है? व्याधि यानि बीमारी। हमारी बीमारी है। शरीर और मन के साथ हमारा तादात्म। आइडेन्टिफिकेशन विद् द बॉडी एंड माइंड। यह हमारी स्प्रीचुअल डिसीज है। एक ही बीमारी है अध्यात्म के इस रास्ते पर, कि हम अपनी आत्मा को भूल गए और शरीर को और मन को स्वयं का होना समझ रहे हैं। यह है हमारी व्याधि। अगर इसको आपने समझ लिया तो समाधि को समझना बड़ा आसान है। इस व्याधि से जो मुक्त हुए, तन और मन से तादात्म टूटा और चेतन में स्थित हुए, उसका नाम है समाधि। तन और मन से हमारा जो तादात्म है, इसमें थोड़ा सा भेद है। स्त्री-पुरुषों में थोड़ा-सा फर्क,

उसको भी थोड़ा समझ लें। पुरूषों का तादात्म मन से ज्यादा होता है। विचारों से। इसलिए पुरूषों में ज्यादा बुद्धिजीवी होते हैं। प्रोफेसर बनते हैं। वैज्ञानिक बनते हैं। कवि, लेखक बनते हैं। सम्पादक और पत्रकार बनते हैं। महिलाओं को ये सब चीजें पसन्द नहीं आतीं। उनका तादात्म शरीर से ज्यादा है। पुरुषों का तादात्म मन से ज्यादा है।

सुबह से पतिदेव उठकर अपना अखबार फैलाकर बैठ जाते हैं। पत्नियों को समझ नहीं आता है कि इनको क्या हो गया है। क्या ढूँढ रहे हैं ये अखबार में। स्त्रियों को कोई उत्सुकता नहीं है। मैं अक्सर देखता हूँ घरों में पति-पत्नी में झगड़ा होता है। पत्नी सास-बहू का चैनल लगा रही है। घर-घर की कहानी और पति कह रहे हैं न्यूज आ रही है न्यूज सुनेंगे। स्त्रियों को कोई इंटरैस्ट नहीं है कि क्या हो रहा है दुनिया में। भाड़ में जाए दुनिया। घर-घर की कहानी देखना है उनको। यद्यपि उनके घर में भी हो रही है। देखने की जरूरत नहीं। स्त्रियों का रस अलग है। उनको यह देखना है कि हीरोइन ने कौन-सी साड़ी पहनी है। बालों की कौन सी फैशन चल रही है। नए प्रकार के बाल कैसे कटिंग करें। उनको वह देखना है सीरियल में। कहानी-वहानी नहीं सुननी है। उनकी नजर कपड़ों पे, आभूषण पे, बालों के डिजाइन पे लगी हुई है। मेरे पास कई बार फोन आते हैं आस्था चैनल पर शाम को 7.00 बजे प्रोग्राम आता है। अक्सर मेरे पास 7.30 बजे एक-दो फोन जरूर आते हैं। अगर किसी पुरूष का फोन आता है तो वह कहता है कि स्वामी जी आज आपने जो समझाया, जो फिलास्फी समझाई बहुत अच्छी लगी। बड़े अच्छे विचार थे।

महिलाओं का जब फोन आता है तो वह कहती हैं स्वामी जी आज आपके गाऊन और टोपी की मैंचिग बहुत ही अच्छी थी। मैं कहता हूँ आज मैं किस विषय पर बोला? वे कहती हैं वह तो नहीं पता। उनको विषय से कुछ लेना देना नहीं। अगर टोपी की डिजाइन अच्छी है तो अच्छा है, प्रोग्राम अच्छा है। अगर टोपी का डिजाइन बेकार है तो बेकार है। विचारों में क्या रखा है? स्त्रियों को विचारों से कुछ लेना देना नहीं। अधिकांश महिलाएं जो स्कूल कालेज में पढ़ती भी हैं। सिर्फ इसलिए कि पढ़ी-लिखी स्त्री को एक पढ़ा-लिखा कमाऊ पति मिल जाएगा। उनको

पढ़ने लिखने से कुछ मतलब नहीं है। इसलिए अक्सर ऐसा मैंने देखा है कि कोई लड़की बी. ए. सैकिण्ड इअर में ही है और उसकी सगाई हो गई। बस किताबें बन्द। अब कागज कलम में हाथ नहीं लगने वाला। उसकी महीने भर में शादी होने वाली है। अब वह न बी. ए. सैकिण्ड इअर की परीक्षा देगी और न ही वह बी. ए. फाइनल इअर में जाएंगी। छुट्टी पढ़ाई की। क्योंकि बी. ए. तो इसलिए कर रहे थे कि पति मिल जाए। पति ऐसे ही मिल गया। अब क्या करना है। पढ़ाई का अब क्या करना। विचार में कोई उत्सुकता नहीं है। अधिकांश महिलाएं स्कूल कालेज से जिस दिन छोड़ कर आती हैं। उसके बाद कभी किसी किताब में हाथ नहीं लगातीं। अब जो पढ़ती हैं वे फिल्मी पत्रिकाएं, गृह शोभा वगैरहा...। उसका ज्ञान से कुछ लेना देना नहीं होता। पुरूषों का तादात्म मन से है। स्त्रियों का तादात्म तन से है। इस फर्क को थोड़ा सा समझना। किसी पुरुष को अगर कह दो कि तुम्हारे विचार गलत हैं, तो वह लड़ने को तैयार हो जाएगा। किसी महिला से कहो कि विचार गलत है। उसको कोई फर्क नहीं पड़ता। होंगें गलत। महिला को कब बुरा लगेगा जब तुम कहो कि तुम बदसूरत हो। आग बबूला हो जाएगी कि मुझे बदसूरत कहा। किसी पुरुष को कहो कि तुम्हारी शक्ल अच्छी नहीं है, उसको बुरा नहीं लगता। वह कहेगा कि क्या करें पिता जी की भी ऐसी ही शक्ल थी। कुछ खास बात नहीं! हमारे पिता जी भी गंजे थे, हमारे बड़े भाई भी गंजे थे, हम भी गंजे हैं। सो वॉट। कुछ फर्क नहीं पड़ता। स्त्री के लिए बड़ा फर्क पड़ जाएगा।

मैंने सुना है चार लफंगे लड़के एक ब्यूटी पार्लर के सामने खड़े थे। एक पुलिस हवलदार वहाँ से निकला और उसने कहा कि तुम लोग यहाँ क्या बदमाशी कर रहे हो हटो। उन्होंने कहा कि कैसे हटें हमारी नौकरी है। हम सर्विस कर रहे हैं। पुलिस वाले ने कहा कैसी सर्विस हम तो तुमको दिन भर यहीं खड़ा देखते हैं। उन्होंने कहा हमारी नौकरी है, हमको इसी की तन्ख्वाह मिलती है। तो पुलिस वाले ने पूछा तुम्हारी नौकरी है क्या? ब्यूटी पार्लर वालों ने हमको रखा है। जब महिलाएँ यहाँ आएं ब्यूटीपार्लर की तरफ हम उनकी तरफ देखते भी नहीं। हम बिल्कुल उपेक्षा इनडिफरैन्ट। जैसे कि वे हैं ही नहीं। जब वे भीतर से

साज सज्जा करवा कर बाहर निकलती हैं तब हम उनको देखकर एकदम से सीटी बजाते हैं और फिल्मी गीत गाते हैं। यही हमारी ड्यूटी है। हमको इसी की तन्ख्वाह मिलती है।

महिलाओं का तादात्म शरीर से ज्यादा है, विचारों से नहीं है। पुरुषों का तादात्म विचारों से ज्यादा है, शरीर से नहीं है। जब मैं कम और ज्यादा कह रहा हूँ तो ऐसा समझना साठ प्रतिशत, चालीस प्रतिशत। है तो दोनों का ही दोनों से। गृह सज्जा में थोड़ा-सा फर्क है। यह है हमारी मूल आध्यात्मिक भ्रंति। हम हैं चैतन्य स्वरूप। आत्मा को तो हम भूल ही गए और हम समझने लगे कि मैं शरीर हूँ, मन हूँ। अब इसके कन्ट्रास्ट में आप समझें। यह है व्याधि। तो समाधि क्या होगी? इसका ठीक उल्टा। नेति-नेति। नाइदर दिस नॉर दैट। न तो मैं देह हूँ, न ही मैं मन के विचार हूँ। मैं इन दोनों को जानने वाला साक्षी चैतन्य हूँ। उसे जानना ध्यान है, उसे जानना समाधि है।

प्रश्न : एक मित्र ने पूछा है कि मंत्र साधना के बारे में आपकी क्या राय है?

उत्तर : अगर आपको अनिद्रा की बिमारी है, इनसोमिनया की तो ठीक। मंत्र साधना करना। साधना-वाधना नहीं है, सिर्फ हिप्नोसिस का उपाय है। किसी शब्द को आप रटते रहोगे बार-बार तो बोर हो जाओगे, ऊब कर नींद आ जाएगी। कुछ लोग उसी को शान्ति समझ लेते हैं। नींद आने को। अगर आपको नींद नहीं आती तो जरूर मंत्र साधना करना लेकिन इसका अध्यात्म से कुछ लेना देना नहीं है। वह नींद की गोली के इक्वीवेलैंट है। अगर दोनो में चुनना हो ट्रांकुलाइजर गोली में या मंत्र में तो मैं कहूँगा मंत्र साधना ही अच्छा। कम से कम वह केमिकल नहीं है। उसके साइड इफैक्ट नहीं हैं और इसका धर्म या समाधि से कोई भी नाता नहीं है। अच्छी नींद आना अच्छी बात है। लेकिन वह अध्यात्म नहीं है। इसलिए मंत्र साधना के पक्ष में मैं नहीं हूँ। मंत्र में हम एक ही शब्द को रिपीट जब हम करते हैं तो हमारा मन बोर हो जाता है और सो जाता है बचने के लिए।

कभी छोटा बच्चा नहीं सो रहा हो तो आपने देखा है माताएँ क्या करती हैं। उसे सीने से लगा लिया पीठ पर उसे थपकी दे रही हैं, और

लौरी गा रही हैं। राजा मुन्ना सो जा। राजा बेटा सो जा। राजा बेटा सो जा। एक ही लाइन। वे समझ रही हैं कि उनकी आवाज लता मंगेशकर जैसी है, इसलिए बच्चा सो गया मधुर आवाज से। कुछ मधुर सुनकर नहीं सोया है। एक तो उसको सीने से लगा लेने से हृदय की आवाज, माँ के हृदय की आवाज, धक-धक-धक-धक लगातार सुनाई पड़ रही है। ऊपर से पीठ पर उसके थपकी पड़ रही है थप, थप, थप और फिर ये देवी कह रही हैं राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा। इतना रिपीट करोगे तो राजा बेटा क्या, राजा बेटा के बाप भी सो जाएंगे। बोर हो गया बेटा। कब तक सुनेगा यह बक-बक-बक-बक। उसने सोचा कि इससे अच्छा तो सो जाओ।

सारी मंत्र साधना बस ऐसे ही है। तुम राम-राम-राम करो या रहीम या रहमान चिल्लाओ कि कोका कोला, कोका कोला, कोका कोला बोलो सब बराबर है। ऐसा मत सोचना कि कोका कोला कहने वाला अधार्मिक और राम राम कहने वाला धार्मिक है। तुम कोई भी शब्द रिपीट करो, रिपीट करने से बोरडम् पैदा होती है, ऊब हो जाती है, नीरसता पैदा हो जाती है और हम बचना चाहते हैं। बचने का और कोई उपाय नहीं है, सो जाओ। बेहोश हो जाओ। मूर्च्छित हो जाओ। मंत्र साधना को अध्यात्म मत समझना। साधना जगाने के लिए है। सुलाने के लिए नहीं। ओशो का यह वचन स्मरण रखना- 'साधना जगाने के लिए है, सुलाने के लिए नहीं।'

प्रश्न : एक मित्र ने पूछा है कि समाधि साधना के क्या परिणाम हमारे जीवन में आते हैं? कृपया संक्षेप में समझाएँ?

उत्तर : सबसे पहला परिणाम अन्तर्आत्मा में जो आएगा वह है शान्ति, शून्यता, विश्राम, ए डीप रिलैक्शेसन विद् अवेरनैस। गहन विश्राम किन्तु जागरण के साथ। मैं भाव का खो जाना, अहंकार की शून्यता, यह अंतर्आत्मा में घटित होगी।

दूसरी चीज घटेगी समय शून्यता। टाइमलैसनैस् समाधि में। यह तो बिल्कुल प्राणों के केन्द्र में ये वाली घटनाएँ घटेंगी। मन में क्या घटेगा? मन में घटेगी प्रफुल्लता, प्रसन्नता एक प्रकार का आनन्द भाव, प्रसन्नता का भाव, अकारण पुलक जैसे कोई फूल खिल गया हो। ऐसे मन खिल

जाएगा। मन के भीतर प्रज्ञा और विवेक का जन्म होगा। सामान्यत: हमारा मन केवल विचार करता है। यांत्रिक रूप से विचार चलते जाते, चलते जाते, चलते जाते हैं। यह विचारों को मिलने वाली शक्ति विवेक को मिलेगी। एक डिस्इन्टीग्रेशन पैदा होगा। तो हमारा मन बड़ा शार्प हो जाएगा। बड़ी पैनी बुद्धि हो जाएगी। प्रतिभा का विकास होगा। तो अन्तर्आत्मा में अहंकार शून्यता, समय शून्यता, मन के तल पर विवेक और प्रज्ञा का उदय और बाहरी आचरण में भी इसके परिणाम आएंगे। बाहरी आचरण में प्रेम और करूणा का भाव, मंगल भाव, सद्भाव पैदा होगें। द्वन्द्व मिटेंगे। जो डुअलिटी थी कि यह करूँ कि वह करूँ हमारे आचरण से वे विदा होगीं। सीधा-सीधा भीतर से स्पष्ट होगा कि क्या करना है, क्या नहीं करना है? जो खंड-खंड डोलने वाला मन था, मैं इधर जाऊँ कि उधर जाऊँ वह मामला समाप्त होगा। व्यक्तित्व में एक अखण्डता आएगी। जिसको गुरजिएफ कहता था क्रीस्टीलाइजेशन। एक एकाग्रता, समग्रता। हमारे भीतर एक अखण्डता आएगी, जो खण्ड-खण्ड थे व्यक्तित्व के, वे विदा होंगे। विपरीत चीजें समाप्त होंगी। हिन्दी में क्रीस्टीलाइजेशन के लिए कहना कठिन है। अखण्डता शब्द ही अच्छा लगता है। फिर भी इससे पूरी बात स्पष्ट नहीं हो पा रही। जिन लोगों ने कैमिस्ट्री पढ़ी हो, वे क्रीस्टीलाइजेशन समझते हैं। ऐसा एक इन्टीग्रेशन, भीतर हम एकजुट हो जाएंगे। भीतर एक प्रमाणिकता आएगी। अथेन्टिसिटी आएगी। जैसे हम भीतर हैं, वैसा ही हमारे बाहर भी हो जाएगा। पाखण्ड समाप्त होगा और सरलता और सहजता आएगी। जो आदमी भीतर अहंकार शून्य हो गया, बाहर उसके व्यक्तित्व में अन्तर्आत्मा में, मन में और आचरण में सरलता और सहजता आने लगेगी। यह समाधि के परिणाम होंगे।

प्रश्न : एक मित्र ने पूछा है कि आनन्द पाने का क्या लक्ष्य है? इसका क्या लाभ होगा?

उत्तर : आप गलत जगह आ गए। लाभ और फायदे की भाषा बाजार की भाषा है। मंदिर की भाषा नहीं है। आनन्द अपने आप में ही लक्ष्य है। आनन्द का और कोई लक्ष्य नहीं होता। तुम पूछो परमात्मा पाने से क्या फायदा है। बड़ा विचित्र सवाल हो जाएगा। अन्य सब साधन

परमात्मा को पाने के लिए हैं। लेकिन परमात्मा किसी का साधन नहीं है। परमात्मा स्वयं ही साध्य है। जिसे हम ध्यान कहें, समाधि कहें, प्रेम कहें; जीवन में जो कुछ भी महत्वपूर्ण है, वह स्वयं अपने आप में लक्ष्य है। अपना ही साध्य है वह। अगर आप किसी को प्रेम करते हैं और उससे आप पूछें कि तुम्हें प्रेम करने से मुझे क्या फायदा होगा? बड़ा विचित्र सवाल हो जाएगा। कभी आपने ऐसा सवाल किसी से पूछा कि मैं आपको प्रेम करूँ इससे मुझे क्या लाभ होगा? इससे स्पष्ट हो जाएगा कि आप प्रेम करते ही नहीं। आप प्रेम का भी उपयोग करना चाह रहे हैं। दूसरे की कुछ युटीलिटी, दूसरे को साधन की भांति उपयोग करना चाह रहे हैं। फिर तो यह प्रेम न हुआ। यह तो शोषण हो गया, एक्सप्लायटेशन हो गया। क्या परमात्मा का भी एक्सप्लायटेशन करोगे। नहीं, आनन्द समस्त चीजों का लक्ष्य है। किन्तु आनन्द स्वयं साध्य है। वह किसी का साधन नहीं है और इस कसौटी को जीवन की हर गहरी बात पर लगाना।

अभी मैंने शुरुआत जहाँ से की थी न! कबीर साहब के वचन से-

'गहरे पानी पैठ'

गहराई किसको कहोगे। गहराई की परिभाषा- गहराई स्वयं अपने आप में साध्य है। वह किसी और का लक्ष्य नहीं है। बाकी सब चीजें साधन हैं, साध्य नहीं हैं। साध्य गहराई है। उस गहराई को पाना है। इस एक छोटे-से गीत की चार पंक्तियाँ आपसे कहूँ-

'यह मेरा सौभाग्य की अब तक,
मैं जीवन में लक्ष्यहीन हूँ।
मेरा भूत भविष्य न कोई,
वर्तमान में चिर नवीन हूँ।

आनन्द में डूबे व्यक्ति का न कोई भूत रह जाता, न कोई भविष्य रह जाता। शुद्ध वर्तमान। लक्ष्य के साथ तो हमेशा भविष्य आ जाता है। जहाँ भी टारगेट होगा; वहाँ भविष्य आ जाएगा।

'यह मेरा सौभाग्य की अब तक,
मैं जीवन में लक्ष्यहीन हूँ।

मेरा भूत भविष्य न कोई,
वर्तमान में चिर नवीन हूँ।
कोई निश्चित दिशा नहीं है,
मेरी चंचल गति की बंधन।
कहीं पहुँचने की न त्वरा में,
आकुल व्याकुल है मेरा मन।
खड़ा विश्व के चौराहे पर
अपने में ही सहज लीन हूँ।
यह मेरा सौभाग्य की अब तक,
मैं जीवन में लक्ष्यहीन हूँ।

सारे जीवन का लक्ष्य उस लक्ष्यहीन गहराई को पाना है।

जिन खोजा तिन पाइया।

जो उसे खोजते हैं, वे उसे पा लेते हैं। वह हमारे भीतर ही छुपी हुई है।

कुछ प्रश्न छूट गए हैं। प्रतिदिन आस्था चैनल पर शाम को 6.50 बजे से 7.20 तक जो प्रोग्राम आता है, मैं कोशिश करूँगा कि जितने भी प्रश्न बाकी रह गए हैं उनके जवाब मैं आस्था चैनल पर दे दूँ और कुछ प्रश्न तो ऐसे हैं जिनका उत्तर आलरेडी हो चुका है। थोड़ा-सा शब्द का हेर-फेर है। करीब-करीब मिलता जुलता सवाल है। उनको मैं छोड़ दूँगा।

तो प्यारे मित्रो, आप सबने मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना उसके लिए धन्यवाद देता हूँ और आप सबको निमंत्रण देता हूँ कि अगर आपके भीतर उस परमानन्द को पाने की, जो कि जीवन का लक्ष्य है, उस गहरे पानी पैठने की तमन्ना और इच्छा पैदा हुई हो तो छः दिन का समय निकालकर हमारे पास आएं।

बहुत-बहुत धन्यवाद।